किस्सा पंजाब

अंतर्भारतीय पुस्तकमाला

किस्सा पंजाब

संपादन
हरिभजन सिंह

अनुवाद
विजय चौहान

नेशनल बुक ट्रस्ट, इंडिया

ISBN 81-237-2901-7

पहला संस्करण : 1974

दूसरी आवृत्ति : 2000 *(शक* 1921)

Original title : Kissa Punjab *(Punjabi)*
Translation : Kissa Punjab *(Hindi)*

रु. 25.00

निदेशक, नेशनल बुक ट्रस्ट, इंडिया, ए-5 ग्रीन पार्क नयी दिल्ली-110016 द्वारा प्रकाशित

अनुक्रम

भूमिका

पंजाबी भाषा और पंजाबी संस्कृति को अपनी धरती के नजदीक रहने का शौक है। बेशक पंजाबी लोग सभ्यता के हर नये और पेचीदा विस्तार को अपनाने के लिए तैयार रहते हैं, लेकिन वे अपनी पहली-पुरानी और सादी जीवन-परिपाटी के प्रति वफादार रहते हैं। धर्म और कला दोनों क्षेत्र इस सादगी की गवाही देते हैं। यहां की मिट्टी में से उगा न धर्म पेचीदा है, न नृत्य-संगीत, न कविता अथवा स्थापत्य कला ही पेचीदा है। नवीनता को बहुत तेजी से अपनाने वाला पंजाब इसी सादगी की बदौलत ही स्थिर बना रहता है और इसके पैर अपनी पुरानी और गहरी परंपरा में टिके रहते हैं।

नवीनता और परंपरा का यह सहज सम्मिश्रण ही पंजाबी किस्सों का विशेष गुण है। मध्यकालीन पंजाब ने बाहर से आने वाले हमलावरों से बहुत कुछ अपनाया, लेकिन अपनी सादगी के जोर से उसे इस तरह अपने अनुसार ढाल लिया कि आज यह पहचानना भी मुश्किल है कि इसका असली स्वरूप देसी है या परदेसी। अगर भाषा को टटोलें तो लगता है कि यह परदेसी शब्द है और कविता की यह बानगी परदेसी हमलावरों के साथ ही पंजाब में आकर बस गई होगी, लेकिन बलिहारी पंजाबी कवियों की, कि उन्होंने अपनी धरती में से ही हीर-रांझा, मिरजा-साहिबां, सोहनी-महीवाल, सस्सी-पुन्नू, पूरन भगत और राजा रसालू के ऐसे किस्से पैदा किए कि आज इनके बगैर पंजाबी काव्य-परंपरा की कल्पना भी नहीं की जा सकती। पंजाबी बेगानों को भी बड़े मोह से अपने परिवार का आदमी बना लेते हैं, इस बात का कुछ अंदाज सोहनी-महीवाल और सस्सी-पुन्नू के नायकों से ही लगाया जा सकता है। गुजरात के नजदीक, कुम्हारिन सोहनी के प्रेम में गिरफ्तार पंजाब का भैंस चराने वाला सुंदर, सजीला महीवाल मध्य एशिया के राज-घराने से संबंध रखता था। इसी तरह सस्सी भी धोबियों के घर पल कर बड़ी हुई थी। लेकिन उसका प्रेमी पुन्नू कोई परदेसी बलोच था, जो रेगिस्तान का कठिन सफर तय करके ही यहां पहुंचा था। सहती का आशिक मुराद भी बलोच था। अपने दिल के खास नजदीक की कहानियों में भी पंजाबी कवियों ने परदेसियों को नायक बना कर बसा लिया है। यही पंजाबी जीवन और पंजाबी कला का सहज चमत्कार है। एक मजेदार बात यह है कि इन कहानियों में कहीं भी देस-परदेस के बीच टकराव नहीं आता। कोई नायक इसीलिए अस्वीकृत नहीं किया जाता कि वह परदेसी है। पुन्नू से तो सस्सी के बाप ने खुशी-खुशी अपनी बेटी की शादी कर दी थी। गैर-पंजाबी को स्वभाव के अनुसार ढाल लेना और उसे अपने परिवार का अंग बना लेना, यह बात सिर्फ पंजाबी कविता तक ही सीमित नहीं, यह समूचे पंजाबी जीवन की विशेषता

है। पंजाबी भाषा, पंजाबी स्थापत्य कला और पंजाबी संगीत में भी यही जुगत दिखाई देती है। यही पंजाब के खुले और सतत् विकासशील स्वभाव का विलक्षण गुण है।

पंजाबी किस्सों ने न सिर्फ परदेसियों को पंजाबी बनाया है, बल्कि पंजाबी नौजवानों को भी परदेसों में ही प्रेमी बनता दिखाया है। पंजाबी किस्से मध्यकाल की पैदावार हैं, जब रेलों, सड़कों और जहाजों जैसे आवागमन के साधन नहीं थे। तब 'सौ-पचास कोस' और 'नौ सौ मील बरेते' में कोई फर्क नहीं था। नदियों के ऊपर पुल नहीं थे। सावन महीने की नदी और जेठ-आषाढ़ का मरुस्थल पार करना एक सा कठिन था। "जा धीये रावी, ना कोई आवी ना कोई जावी" (बेटी रावी पार जा, तुझसे मिलने न कोई जा सकेगा, न ही उस तरफ से कोई आ सकेगा)। यह कहावत सदियों तक लोगों की जुबान पर चढ़ी रही है। लोक-सत्य यह है कि हमारे लिए नदी के पार परदेस था। इसी तरह की लोकचेतना के वायुमंडल में हीर-रांझे का किस्सा अस्तित्व में आया। पंजाबी किस्सों के सारे नायक मुसाफिरी की हालत में हैं और पंजाब की प्रेम-भावना का मुसाफिरी से गहरा संबंध है। अपने घर-बार से बिछुड़े रांझे ने जब हीर को हाथ में छड़ी लिए कहर भरे क्रोध की हालत में देखा तो कहने लगा :

रांझा आखदा अेह जहान सुपना,
मर जावणा ई नैनां वालीये नी ।
तेरे जये पिआरियां अेह लाजम,
आये गये मुसाफरां पालीये नी ।।

मुसाफिरी और प्यार का एक-दूसरे से अटूट रिश्ता जोड़ कर वारिशाह ने पंजाबी चरित्र के इस गहरे सुप्त तत्व की ओर इशारा किया है। पंजाबी किस्सों के नायक ही नहीं, लोकनायक भी अपने घरों से टूट कर ही पंजाबी मुहब्बत के काबिल बने हैं। पंजाब के सर्वोत्तम लोकनायक गुरु नानक की मिसाल तो हमारे सामने है ही, जिन्होने अपने कर्म-प्रधान जीवन का अधिक हिस्सा चारों दिशाओं की मुसाफिरी में ही बिताया। पंजाबी संस्कृति और आजादी की खातिर संग्राम करने वाले गुरु गोबिंदसिंह भी सारी उम्र— प्रकाश से ज्योति जोत में समाने तक— अपने असली देश माझे से बाहर रहे। आज तक भी पंजाबी महत्वाकांक्षा दूर सफर पर जाने की प्रतीक्षा करती है। ऐसा लगता है कि पंजाबी प्रतिभा अपने घर से टूट कर ही प्रामाणिक प्रकाश प्राप्त करती है। प्रेम-किस्सों के नायक रांझा आदि अपने घरों से दूर अपनी लीला दिखा रहे हैं, पूरन भगत, राजा रसालू और दुल्ला भट्टी आदि भक्त और साहसी नायक भी इसी लीक पर चलते प्रतीत होते हैं। पूरन तो सौतेली मां के त्रिया-चरित्र का शिकार होकर घर से बेघर हुआ था, लेकिन राजा रसालू ने अपनी मरजी से अपना घर छोड़ दिया था। इन दोनों को प्यार प्राप्त हुआ था, चाहे दोनों को जतियों-सतियों की तरह जीने का शौक था। रानी सुंदरां ने पूरन को अपना बनाने का जतन किया। सुंदरां किसी ऐसे देश की शासक थी, जहां औरतों का ही हुक्म चलता था। जाहिर है कि यह पंजाब से बाहर किसी इलाके की तरफ संकेत है। राजा रसालू ने सिरीकोट के

राजा सिरकप की नवजात लड़की कोकलां को अपनी जीवन-संगिनी के रूप में स्वीकार किया। अनुमान लगाया गया है कि सिरकप का देश भी पंजाब से बाहर है। दुल्ला पंजाब में ही पैदा होकर पला। उसकी सारी जिंदगी इसी धरती पर व्यतीत हुई थी। लेकिन उसने अपने लिए काम ही कुछ ऐसा चुन लिया था कि वह अपने घर में टिक कर नहीं बैठ सकता था। हमारे नायक बेघर ही नहीं, बेयार भी हैं। जिंदगी की मुसाफिरी का रास्ता तो हम लोगों को अकेले ही तय करना है, इसमें हमारा कोई साथी नहीं। इस बेघर, बेयार जिंदगी में हमें केवल परदेसी दुनिया की प्रेम-भावना का सहारा है, जो ईश्वर की तरह दुख-दर्द के क्षणों में नजदीक होकर हमारे पास पहुंचती है। यह प्रेम-भावना ही देस-परदेस के भेद और दूरी को मिटा देती है, इस दूरी के मिट जाने के बाद ही पंजाबी प्रतिभा अपनी असली दीप्ति में आती है।

हालांकि इन लोकनायकों की कहानियों को हमारे समर्थ कवियों ने लिपिबद्ध किया, लेकिन बड़े कवियों के हाथ चढ़ने से बहुत पहले ही ये कथाएं पंजाबी लोक-मानस में गहरी उतर चुकी थीं। पंजाबी कवियों ने सिर्फ नायकों को ही नहीं, कुछ किस्से-कहानियों को भी बाहर के स्रोतों से प्राप्त किया। लैला-मजनू, शीरी-फरहाद, सैफ-उलमलूक, यूसफ-जुलैखां आदि कहानियां भी हमारे कवियों को पसंद आईं। इन्हें अपना बना कर पंजाबी कवियों ने सुंदर किस्सों की रचना की। कुछ पंजाबी किस्से भारत के पुराने और सांझे सरमाये से भी संबंधित हैं। लेकिन पंजाबी लोकमानस ने अपनी धरती में से स्वत: फूट कर निकले किस्सों को जो मान्यता दी है, वह किसी और के हिस्से में नहीं आई। चार पंजाबी कवियों के नाम, जब तक दुनिया कायम है, पंजाब की चार अमर कहानियों ने रोशन कर दिए हैं। कवियों के नाम और किस्सों के नाम एक-दूसरे से अलग नहीं किए जा सकते। हीर-वारिस, सस्सी-हाशिम, सोहणी-फजलशाह के नाम तो लोगों की जबान पर हैं। पीलू का मिरजा और कादरयार का पूरन भगत भी इसी तरह एक ही सांस में याद किए जाते हैं। कवि और नायक के बीच किसी तरह की लकीर खींचना मुमकिन नहीं। इस तरह की अभिन्न साझेदारी का कारण यह है कि काव्य-किस्सों का रूप धारण करने से पहले ये कहानियां लोक-मानस का सहज अंग बन चुकी थीं। जब वारिस, हाशिम, पीलू आदि समर्थ कवियों की कविता लोगों को पसंद आई तो वे सहज ही लोक-मानस में टिक गए। हर कहानी से संबंधित लोक-काव्य का कोई न कोई अंश आज भी ढूंढ़ा जा सकता है :

चलो सईयो चल वेरूण चलीये,
रांझे दा चुबारा नी।
हीर निमाणी इट्टां ढोवे,
रांझा ढोवे गारा नी।

(सखियो, चलो, रांझे का चौबारा देखने चलें। बेचारी हीर ईंटें ढो रही है और रांझा गारा ढो रहा है।)

सोहणी हिजर दे दीवे पई बालदी,
कोई खबर लयावे महीवाल दी ।

(सोहनी विरह के दीपक जला रही है। कोई महीवाल की खबर ले आए।)

ना जावीं रांझा वे,
सानूं बहरे गमां विच्च रोड़ के ।

(रांझा, हमें बहरे गमों में बहा कर मत जाना।)

कोई जावो सईयो नी,
रांझण नूं ल्यावो मोड़ के ।

(सखी जाओ, कोई जाकर रांझे को लौटा लाओ।)

चल नियां कराईये वे,
रांझणा तू काला, मैं गोरी ।

(चलो, चल कर इंसाफ कराएं। रांझा तू काला है और मैं गोरी हूं।)

इस तरह के अनेक काव्यांश लोग खुद-ब-खुद जोड़ते रहे हैं। कुछ देर तक ये लोगों के मुंह चढ़े रहे, फिर भूल-भुला गए। लेकिन दुल्ला भट्टी और सुंदरी से संबंधित एक अंश तो अमर हो गया है। आज तक लोहड़ी वाले दिन लड़के इसी को सुना कर लोहड़ी मांगते हैं। यह कहानी लोग भूल चुके हैं, लेकिन मालूम नहीं किस शुभ घड़ी में किसी लोक-कवि ने निम्नलिखित तुकें जोड़ दीं, जो लोगों की जुबान पर ऐसी चढ़ी हैं कि इन्हें भुलाना संभव नहीं :

सुंदर मुंदरिये, हो
तेरा कौन विचारा, हो
दुल्ला भट्टी वाला, हो
दुल्ले धी ब्याही, हो
सेर शक्कर आई, हो
कुड़ी दे बोझे पाई, हो
कुड़ी दा लाल पटाका, हो
कुड़ी दा सालू पाटा, हो
सालू कौन समेटे, हो
चाचा गाली देसे, हो
चाचे चूरी कुट्टी, हो
जिमींदारां लुट्टी, हो
जिमींदार सदाये, हो
गिन-गिन पौले लाये, हो ।

यह प्रामाणिक लोकगीत है, जिसमें कहानी के धागे आगे-पीछे उलझ गए हैं। लोकगीत का यह स्वभाव है। कहानी तो लोगों को मालूम ही होती है, लोककवि उसे

अपना मनचाहा रूप दे देता है। सुंदरी मातृ-विहीन थी, उसके बाप का साया भी उसके सिर पर नहीं था। चाचा जमींदार था। इलाके में से अकबर बादशाह गुजरने वाला था, जमींदारों ने फैसला किया कि सुंदरी को बादशाह के सामने पेश किया जाए। गांव की सबसे सुंदर (लाल पटाखा) और सबसे गरीब (फटे सालू वाली) लड़की की रक्षा करने वाला 'कौन बेचारा' था ? बात दुल्ला भट्टी तक पहुंचाई गई। दुल्ला दीन-दुखी का हितैषी था, उसने फौरन अपनी बेटी की तरह सुंदरी की शादी रचा डाली। जल्दी-जल्दी में शादी की धूमधाम का इंतजाम भी न हो सका। 'सेर शक्कर' से ही शादी का शगुन किया गया। लेकिन उसने 'चूरी' कूटने वाले जमींदारों की खूब दुर्गति बनाई। इस तरह के लोकगीतों में से निकल कर ही पंजाबी लोकनायकों ने किस्सों की दुनिया में अपनी जगह बनाई। काव्य-नायक बनने से पहले वे लोककाव्य-नायक और काव्य-नायक बन चुके थे। ये सारे लोकनायक पंजाब के सीधे-सादे लोकधर्म की ओर संकेत करते हैं। पंजाबी लोकधर्म का लगभग सारा विवरण 'सुंदर-मुंदरिये' वाले लोकगीत तथा दूसरे पंजाबी किस्सों में प्राप्त है। पंजाब ने लाल पटाखा सौंदर्य को किसी न किसी तरह फटे हुए सालू वाली गरीबी के साथ जोड़ कर रखा है। कुम्हारिन सोहणी, धोबिन सस्सी, भैंस चराने वाला अजीमबेग, भैंस चराने वाला रांझा, पंजाब की खूबसूरत, लेकिन गरीब जवानी के ही प्रतीक हैं। राजा के बेटे पूरन और रसालू की लोककथा भी लोकप्रिय हुई। इसका मुख्य कारण तो यही है कि वे राजकुमार होते हुए भी राजपाट को लात मार कर गरीबी की हालत में घूमते रहे। पंजाबी लोकप्रतिभा ने अपनी स्वीकृति की मोहर गरीब सौंदर्य के ऊपर लगाई है। लोक-स्वीकृति की दूसरी कसौटी है सदाचार। इस गीत में दुल्ले ने सुंदरी को बेटी बना लिया। हीर-रांझे के प्यार के ऊपर पांचों पीरों का हाथ है। पूरन को गुरु गोरखनाथ का वरदान प्राप्त है। इस तरह के छोटे-मोटे विवरण लगभग हर एक किस्से में मिलते हैं। प्यार हो या फकीरी, चोरी हो या साधुपन, हर जगह सदाचार एक धार्मिक सच्चाई की तरह मौजूद है। सदाचार ने गरीबी को भी अपने ढंग की अमीरी बख्श रखी है।

हमारे किस्सों का तीसरा महत्वपूर्ण गुण है, व्यक्ति की स्वातंत्र्य भावना। बहुत बार परिवार इस स्वतंत्रता के रास्ते में रुकावट डालता है, लेकिन व्यक्ति पारिवारिक पाबंदियों को पार करना चाहता है। व्यक्ति और परिवार में टक्कर, पंजाबी किस्सों का एक ऐसा लक्षण है जिसके बगैर इनकी कल्पना ही नहीं की जा सकती। पंजाबी प्यारे सांस्कृतिक संयम में रहना चाहते हैं, लेकिन पारिवारिक बंधन में रहना उन्हें स्वीकार नहीं। हर पंजाबी सर्व-स्वीकृत संस्कृति की अधीनता तो स्वीकार करता है, लेकिन उसके भीतर रह कर वह चाहता है कि वह अपनी जिंदगी के फैसले खुद करे। जहां भी व्यक्ति के भाग्य का फैसला परिवार करना चाहता है, वहीं टकराव पेश हो जाता है। सुंदरी का चाचा, सुंदरी की मरजी के खिलाफ उसे बादशाह की विलासिता का साधन बनाना चाहता है, यहीं से लोकधर्म उसका विरोध करता है। हीर, सोहनी और साहिबां भी अपनी शादी का फैसला खुद करने के लिए अपने परिवार से जूझती हैं।

सस्सी को अपने परिवार की स्वीकृति मिल जाती है, लेकिन उसके पति का परिवार अड़चन डाल देता है। पूरन के दुखों की कहानी की शुरुआत ही सौतेली मां और राजा पिता के मनमाने फैसलों के कारण होती है। मां-बाप अपने बेटे को अपनी मरजी के मुताबिक मोड़ना चाहते हैं, लेकिन बेटा अपनी स्वातंत्र्य भावना के मामले में कोई समझौता करने को तैयार नहीं। रसालू की कहानी भी न मुड़ने वाली स्वतंत्रता के प्रचंड वेग की कहानी है। मध्यकाल के समूचे भारतीय साहित्य-संसार में शायद पंजाबी नायक-नायिकाओं का स्वभाव सबसे अधिक विलक्षण है। पारिवारिक प्रतिबंधों के खिलाफ इस तरह का प्रचंड विरोध कहीं और नहीं मिलता। समाज एक अत्यंत बलवान, किंतु अमूर्त यथार्थ है। हमारे किस्सों में अस्पष्ट समाज-विरोध को स्थान नहीं मिला। किस्से लोकजीवन के बहुत नजदीक हैं और कवियों ने समाज के अत्यंत निकट और स्पष्ट विवरण की ओर ही ध्यान दिया है। समाज का सबसे प्रबल और स्पष्ट अंग परिवार है। मध्यकालीन पंजाबी रचनाओं में इसका आधुनिक विवरण एक ललकार की तरह पेश है। ध्यान देने के योग्य बात यह है कि किस्सों के पात्र मरते दम तक अपनी स्वतंत्रता के प्रति वफादार रहते हैं, लेकिन वे कहीं भी संयम की सीमा का उल्लंघन नहीं करते। हीर अपने कठिन संघर्ष से रांझे को प्राप्त कर लेती है। लेकिन उसके बाद वह अपने मां-बाप की स्वीकृति प्राप्त करना चाहती है और उनके अधीन रह कर ही अपना नया जीवन आरंभ करना चाहती है। पुन्नू के चले जाने के बाद सस्सी उसके पीछे भागती है। सोहनी अपने पहले प्यार के प्रति वफादार अपने प्रेमी से मिलती है, लेकिन सामाजिक रीति-रिवाजों के अनुसार हुई शादी को वह तोड़ नहीं सकती। जोगी बन जाने के बाद भी पूरन के मन मे मां-बाप के प्रति आदर-भाव रहता है, सौतेली मां को भी वरदान देने के लिए वह फिर अपने शहर में लौटता है। इस तरह के अनेक विवरण इन किस्सों में मिलेंगे, जिनसे पता लगेगा कि पंजाबी आचरण अपनी स्वतंत्रता को सामाजिक संयम के घेरे में रखना चाहता है। लेकिन अगर संयम बंधन बन कर व्यक्तिगत स्वतंत्रता का गला घोंटने लगे तो वह उसके विरोध के लिए डट कर खड़ा हो जाता है। आजादी को कहीं भी आवारागर्दी करने की इजाजत नहीं, लेकिन संयम को भी यह इजाजत नहीं कि वह बंधन का रूप धारण कर ले।

पंजाबी लोक-मानस ने किस्सों को जितना प्यार किया है, उतना किसी भी दूसरे काव्य-रूप को नहीं किया। मध्यकालीन पंजाबी साहित्य की कुछ धारणाएं तो किसी एक लोक-समूह का धर्म बन गई हैं। वे हमारे मन में बहुत गहरी उतर गई हैं। लेकिन वे समूची पंजाबी जनता में एक सी स्वीकृति नहीं पा सकीं। पंजाबी किस्से का शरीर और आत्मा भी धर्म से संबंधित हैं। यह अपनी तरह का लोकधर्म है जो संस्थाओं की जकड़ से मुक्त है। दरअसल पंजाबी लोक-व्यवहार में लोकधर्म का ही वास है जिसका सीधा-साधा अर्थ यह है कि पंजाबी जहां जनमे, पले, वहीं का रहन-सहन अपना लिया। लेकिन भीतर के सच को निस्संकोच व्यक्त किया। भीतर के सच को बेलगाम न होने दिया, लेकिन बाहर के

सच को अपनी नाक में नथ डालने की इजाजत भी न दी। सदाचार का मध्यमार्ग ही पंजाबी व्यवहार और पंजाबी किस्से का मार्ग है। दैनिक जीवन में इसी रास्ते पर चला जा सकता है।

संक्षेप में, सादगी, सदाचार, स्वतंत्रता और संयम का संयुक्त संसार ही पंजाबी किस्सों का संसार है।

— हरिभजन सिंह

हीर रांझा

मोहन सिंह

हीर की कहानी मुगलों के हिंदुस्तान में आने से कुछ समय पहले ही घटी थी। यह वह समय था जब राजपूत नये-नये मुसलमान बने थे। सियाल, धारनगर के राजपूत थे। सन् 1258 में राय सियाल, सुपुत्र राय शंकर ने बाबा फरीद शकरगंज के हाथों से इस्लाम कबूल किया था। इन लोगों ने मुसलमान बनने के बाद भी हिंदू रीति-रिवाजों को जारी रखा था। ये लोग अपनी औरतों को पर्दे में नहीं रखते थे। तुर्कों जैसे नीले कपड़े पहनना और पीतल के बर्तनों का प्रयोग भी इनके यहां वर्जित था। सियाल जब पहले-पहल यहां आए तो उनके पुरखे मलखान ने 1162 ई. में झंग बसाया। चूचक भी सियालों का एक सरदार था। हीर इसी मिहर चूचक की बेटी थी। मिहरेटी होने के कारण वह बड़े लाड़-प्यार में पली थी। उसका काम सहेलियों के साथ मिल कर झूला झूलना, चिनाब नदी में नहाना या बहार की तरह सजी अपनी बेड़ी में बैठ कर चिनाब के किनारों पर आकर सघन कुंजों का नजारा देखना था, या पानी की गोद में क्रीड़ा करते हुए सूर्योदय के नजारों और दिन डूबने पर रंगीन परछाइयों की लीला का आनंद लूटना था। जहां हीर जवान, तंदुरुस्त, शोख और निडर थी, वहीं वह बेहद खूबसूरत भी थी। हुस्न और जवानी के मेल ने गजब ढा दिया था, उसकी चाल नवाब के हाथी जैसी थी और चड़तल उकाब के पंख जैसी। जहां, भारतीय परंपरा के अनुसार वह 'मोहिनी और इंद्राणी' थी वहीं ईरानी परंपरा के अनुसार वह 'पुतली पीकने दी, नक्श रूम वाले, गुझ्झी रहे न हीर हजार विच्चों'[1] थी।

झंग का मेहर होने के अलावा चिनाब के घाटों का प्रबंध भी चूचक के हाथों में था। वहां मुसाफिरों को पार ले जाने के लिए कई किश्तियां खड़ी रहती थीं। दिन भर राहगीर और सौदागर घाट को पार करते रहते थे। हर राहगीर की पहली नजर हीर की किश्ती पर पड़ती थी, जिसे हीर के मल्लाह लुड्डन ने बहुत सजा कर रखा था। इस खाली किश्ती को देखते ही राहगीरों की आंखों में अनुपम सपने जगने लगते थे, लेकिन जिन्हें हीर के भी दर्शन हो जाते थे, वे तो साक्षात नशे का रूप बन जाते थे। इस तरह राहगीरों और सौदागरों के जरिये हीर के हुस्न और जवानी की कहानियां दूर-दूर तक फैल चुकी थीं।

---

1. चीनी पुतली, रूम वाले नक्श, हीर हजारों में छिपाए न छिपती थी।

तख्त हजारा झंग से अस्सी मील दूर था। वहां भी हीर की खूबसूरती की कहानियां पहुंच गई थीं और वहां के गबरू और मुटियारे[1] हीर के नाम से परिचित हो चुके थे। तख्त हजारे के चौधरी का नाम मौजू था, जो जात का रांझा जाट था। उसके आठ बेटे थे, जिनमें से धीदो सबसे छोटा, खूबसूरत और नाजुक था। बाप की मौत के बाद भाइयों ने जमीन की पैमाइश के बाद बंटवारा किया। बड़ों ने खुद तो अच्छी जमीन हथिया ली, ऊसर और बंजर जमीन धीदो के हवाले कर दी। बाप का लाड़ला बेटा होने की वजह से रांझे ने कभी खेती का काम नहीं किया था, अत: उसने खेती-बारी की तरफ बिलकुल ध्यान न दिया और छैला बन कर लगा गली-कूचों में घूमने। रांझे की भाभियां उस पर जान देती थीं। कुछ दिनों तक तो वे उससे लाड़-प्यार करती रहीं, लेकिन जब उन्होंने देखा कि वह तो सिर्फ तेल से बाल चुपड़ने और बांसुरी बजाने के काबिल ही है, तो उन्होंने उसे ताने देने शुरू कर दिए। अगर रांझा अपनी भाभियों के प्यार का जरा भी प्रतिदान करता रहता तो शायद वे उसे इतने ताने न मारतीं, लेकिन रांझे का स्वभाव अलबेला था। उसकी जवानी बड़ी लापरवाह और बेनियाज थी। सो एक दिन उसकी सबसे छोटी भाभी ने ताना मारा—''अगर तुझे हमारी परवाह नहीं, तो जा, सियालों की हीर ब्याह ला।''

भाभी के ताने ने रांझे का दिल उदास कर दिया और ''हत्थ वंझली, जुत्तियां भार कच्छे, रांझा हो तुरेया वारिस शाह जेहा।''[2] पहली रात उसने रास्ते की एक मस्जिद में गुजारी, जहां उसकी मुल्ला से तकरार भी हो गई। अगले दिन उठ कर रांझा अपने रास्ते पर चल पड़ा। आखिर मंजिलें पार करता हुआ वह चिनाब के घाट पर पहुंचा। सामने लुड्डन मल्लाह अपनी किश्ती को ठेलने के लिए तैयार खड़ा था। रांझे ने रब्ब (खुदा) की दुहाई देकर लुड्डन से पार पहुंचाने की मिन्नत की। लेकिन हट्टे-कट्टे मल्लाह ने रांझे को धक्का मार कर दूर फेंक दिया और किश्ती पानी में ठेल दी। जब लुड्डन की औरतों ने रांझे के हुस्न को देखा, तो उसके गिर्द झुरमुट बना कर बैठ गईं और लगीं उसकी मुट्ठी-चापी करने। जब रांझे की थकावट उतरी तो उसने बांसुरी बजानी शुरू कर दी। फिर क्या था, घाट के सारे मर्द, औरतें उसके गिर्द इकट्ठे हो गए। लुड्डन की औरतें रांझे पर इतनी मोहित हो गईं कि वे उसे हीर की किश्ती में ले गईं, जहां रेशमी पर्दों के भीतर हीर की सेज बिछी थी। रांझा बड़ा लंबा रास्ता चल कर आया था, सेज पर लेटते ही सो गया। जब हीर को पता चला कि लुड्डन ने उसकी सेज पर किसी परदेसी को सुला दिया है तो वह गुस्से से आग-बबूला हो गई और अपनी सहेलियों के साथ भागती हुई वहां आई। आते ही उसने छड़ियां मार-मार कर लुड्डन को लहूलुहान कर दिया। फिर वह लपक कर बेड़ी की तरफ बढ़ी। परदेसी को अपनी सेज पर सोए देख कर उसने गुस्से से एक छड़ी मारी, लेकिन ''रांझे उठ के आखिया, वाह सजन, हीर उस के मेहरबान होई।''[3]

---

1. जवान लड़के और लड़कियां।
2. हाथ में बांसुरी, बगल में जूते दबाए, रांझा वारिसशाह की तरह घर से निकल पड़ा।
3. रांझे ने उठ कर कहा, ''वाह सजन।'' हीर हंस कर मेहरबान हुई।

हीर की आंखों में एक नयी लौ जगमगा उठी। वह किश्ती के पर्दों को खींच कर रांझे के पास पलंग की बाजू पर बैठ गई। न जाने कितनी देर तक राज-नियाज की बातें होती रहीं। जब हीर ने अपना प्यार पेश किया तो रांझे ने कहा, "अगर तू मेहें त्रिंजनों[1] और झूलों में मस्त होकर मुझे भूल जाना है, तो अभी बता दे," तो हीर ने बड़ी गंभीरता से कहा :

मैनूं बाबले दी कसम रांझिया वे,
मरे मांऊं जे तुध थीं मुख मोड़ां।
अन्नीं होये के नैन प्रान जावण,
तेरे बाझ जो कौन्त मैं होर लोड़ां।
मैं तां धुर दरगाह थीं लिआ रांझा,
थीवां सूर जे प्रीत दी रीत तोड़ां।[2]

जब दोनों तरफ से पक्के कौल-करार हो गए तो हीर ने बड़ी चतुराई से अपने मां-बाप को राजी करके, रांझे को भैंसें चराने के लिए नौकर रखवा दिया। चूचक ने बहुत कहा कि यह लड़का तो मुझे बड़ा सुंदर और नाजुक सा मालूम होता है, "अेह मंझीं दे नहीं दरकार दा अे।[3] यह तो अपनी भैंसों को दूसरों की भैंसों के साथ मिला दिया करेगा। इससे उस जंगल की मुसीबतें बर्दाश्त नहीं होंगी, जहां जंगली जानवर खुलेआम घूमते हैं।" लेकिन हीर ने यह कह कर बाप की तसल्ली करवा दी :

बड़ा चतर ते अकल दा कोठ नड्ठा,
मंझीं बहुत संभाल के चारदा अे,।
हिक्के नाल पिआर दे हूंग दे के,
सोटा सिंग ते मूल ना मारदा अे।[4]

बात यूं हुई कि रांझे ने बारह सालों तक सियालों की भैंसें चराईं। वह हर रोज भैंसों को बेले[5] में ले जाता और शाम के वक्त बांसुरी की आवाज के पीछे-पीछे वे घर लौट आतीं। हीर हर रोज चूरी का कटोरा भर कर जंगल में पहुंचती, जहां दोनों मिल कर चूरी खाते और मुहब्बत के अछूते शिखरों पर पहुंच कर बेले के सघन अंधेरों में कहीं-कहीं दिखाई देते। दरिया की धूप-रंगी लहरों की लीला का आनंद लूटते। लेकिन इश्क और मुश्क कब तक छिपते हैं ? जल्द ही सारे झंग में हीर-रांझे के इश्क की चर्चा छिड़ गई। जितने मुंह उतनी बातें। लेकिन हीर-रांझे का जोड़ इतना मेल खाता था कि किसी ने इस

---

1. चर्खा कातने की टोली।
2. रांझा, मुझे अपने पिता की कसम, अगर मैं तुझसे मुंह फेरूं तो मेरी मां मर जाए। अगर तेरे सिवा मैं किसी दूसरे पति की कामना करूं तो मैं अंधी हो, मर जाऊं। मैंने तो रांझा सीधे दरगाह से पाया है, मैं सुअर हो जाऊं अगर प्रीत की रीत तोडूं।
3. यह भैंसें चराने के लिए ठीक नहीं है।
4. यह लड़का बड़ा होशियार और अक्ल का भंडार है, बड़ी सावधानी से भैंसें चराता है। प्यार से पुचकारता है और भैंसों के सींगों पर कभी डंडा नहीं मारता।
5. नदी के किनारे का जंगल।

पर बुरा न माना, बल्कि हर किसी ने इस पर पर्दा ही डाला।

लेकिन इस प्रेम-नाटक में एक उपद्रवी आ घुसा था। वह था हीर का चाचा कैदों लंगड़ा। कैदों का हुलिया कुछ अजीब ही था— सिर पर कलंदरी टोपी, गले में मूंज की माला, हाथ में खपरी, भांग-चरस का शौकीन। गांव से बाहर कुटिया में रहता था। तोते, तीतर, मुर्गे, मुर्गियां रखने का शौकीन था। बात यह थी कि वह आधा जाट और आधा फकीर था। उसने चंडूलखानों, तकियों में भंग पी-पीकर सारी उम्र निकाल दी थी। वह आम फकीरों की तरह छड़ा-छांट था। प्यार-मुहब्बत को फलते-फूलते देख कर जलना उसके लिए स्वाभाविक था। वह कैसे बर्दाश्त कर सकता था कि हीर और उसकी सहेलियां पहले तो रांझे के साथ बैठ कर चूरी खाएं, फिर बेले में लालकचोरी का खेल खेलें। सो, एक दिन कैदों हीर के पीछे-पीछे बेले में चला गया। हीर दरिया से पानी लेने गई थी और रांझा अकेला बैठा चूरी खा रहा था। कैदों ने बड़ी अजीजी से रांझे से थोड़ी सी चूरी मांगी। रांझे ने कटोरा आगे कर दिया और कहा, "मुट्ठी भर ले।" कैदों ने मुट्ठी भर कर चूरी ले ली और लंगड़ाता हुआ गांव की तरफ भागा। जब हीर पानी लेकर लौटी तो रांझे के भोलेपन पर बहुत खीझी। उसे मालूम था कि लंगड़ा अपनी आदत के मुताबिक गांव में पहुंच कर शोर मचाएगा। कैदों अभी गांव तक पहुंचा ही नहीं था कि हीर ने भाग कर उसे पकड़ लिया। उसकी टोपी, माला और मूंज की रस्सियां खींच कर उसकी खूब दुर्गत बनाई, सारी चूरी मिट्टी में बिखर गई। लेकिन हीर के जाते ही कैदों ने उठ कर चूरी का एक-एक टुकड़ा मिट्टी में से चुन लिया और गांव के भीतर आकर शोर मचाया। चूचक और मलकी को बड़ी शर्म आई। हीर का भाई सुलतान तलवार उठा-उठा कर कहने लगा, "मैं उस चाकर के टुकड़े-टुकड़े कर डालूंगा।" उन लोगों ने रांझे को दुत्कार कर निकाल दिया। लेकिन इस मौके पर हीर ने हार नहीं मानी, बल्कि उसने बड़ी दिलेरी से अपने भाई सुलतान से कहा :

अक्खां लग्गीआं मुड़न न वीर मेरे,
वे मैं घोल घत्ती बलिहारियां वे ।
बहन पये दरिया ना कदी रुकदे,
भावें मार देखो बन्हां भारियां वे ।
खून निकलनों कदी ना रुकदा ऐ,
जित्थे लगीयां तेज कटारियां वे ।...[1]

बारह बरसों की मेहनत पर पानी फिरता देख कर रांझा किसी तकिये में जा सोया, लेकिन अगले दिन जब भैंसों को बेले की तरफ ले जाने लगे तो रांझे के बगैर भैंसें चलती ही नहीं थीं। नांदों के आगे बांधा तो उन्होंने सानी को मुंह तक न लगाया। आखिरकार हार

---

1. "ऐ मेरे भाई ! आंखें एक बार लड़ कर फिर नहीं मुड़तीं, मैं बलिहारी जाऊं, बहते दरिया कभी नहीं रुकते, बेशक ऊपर भारी बांध बना कर देख लो। जिस जगह तेज कटारी चुभती है वहां खून जरूर बहता है, हरगिज नहीं थमता।"

कर चूचक और मलकी ने कूटनीति बरती और पुचकार कर रांझे को फिर भैंसों के साथ भेज दिया और हीर को भी समझा दिया कि इतनी बदनामी के बाद तेरा बेले में जाना ठीक नहीं। भीतर ही भीतर उन्होंने फैसला कर लिया था कि हीर की जल्दी ही शादी कर देंगे और चाकर की बला अपने आप गले से उतर जाएगी। लेकिन सारे गांव की हमदर्दी हीर-रांझे के साथ थी। फिर हीर में गजब की चतुराई थी। उसने जल्द ही मिट्ठी नायन के घर को मिलन-स्थल बना लिया। रांझा भैंसों को बेले में छोड़ कर मिट्ठी नायन के घर आ जाता और वहां दोनों जी भर-भर कर बातें करते। कभी-कभी दरिया में नहाने का कार्यक्रम बन जाता। हीर अपनी सहेलियों समेत रांझे के साथ नहाती थी।

अेस तख्त हजारे दे डंबरे ते,
रगं रंग दियों जालीआं पांदी है।[1]

लेकिन जब बात बहुत फैल गई तो खेड़े के साथ हीर के निकाह की बात पक्की की गई। कुछ दिनों बाद ही खेड़े बाजों-गाजों समेत रंगपुर से झंग आ गए। तरह-तरह के पकवान पके, आतिशबाजियां छोड़ी गईं, सारे गांव में गहमा-गहमी हो गई, लेकिन इस रौनक को देख-देख कर रांझा बड़ा परेशान होता। वह उदास और बेबस दिखाई देता था। कभी दरिया के किनारे बैठ कर भांग पीता था, कभी भैंसों के गले में बांहें डाल कर रोता था। अगर हीर की कोई सहेली उसे बुलाती तो वह बात-बात पर रुआंसा हो जाता था। उधर हीर 'याईयें'[2] पड़ी थी। उसे रांझे की दिलगीरी का पता था। उसने अपनी सहेलियों से कहा, ''जाने से पहले मैं रांझे से एक बात करना चाहती हूं। जाओ, उसे लड़की के भेस में मेरे पास ले आओ।'' जब रात काफी बीत गई, हीर की मौसियां, फूफियां उसके पास से उठ गईं, और सिर्फ हीर की कुछ सहेलियां उसके पास रह गईं तो रांझा स्त्री के भेस में हीर के पास आया। कुछ स्त्री के भेस से उस पर रूप चढ़ा था, कुछ उदासी से। हीर ने रांझे से कहा, ''मेरी बात मान ले, मुझे अभी भगा कर ले चल। कल अगर मां-बाप ने मुझे डोले में बैठा दिया तो फिर किसी का बस नहीं चलेगा।'' लेकिन रांझे का आदर्श तो हीर को ब्याह कर ले जाना था।

हीरे इश्क ना मूल स्वाद देंदा,
नाल चोरियां अते उधालियां दे।[3]

हीर ने बहुत समझाया, लेकिन रांझा अपनी जिद पर अड़ा रहा और अगले दिन खेड़े हीर को डोली में डाल कर रंगपुर के लिए रवाना हो गए। हीर के बाप ने दहेज में बहुत-सा गहना-कपड़ा दिया, कई गाय-भैंसें भी दीं, लेकिन अब मुश्किल यह बनी कि रांझे के बगैर भैंसों ने चलने से इंकार कर दिया। हार कर रांझे को भी साथ ही भेजना पड़ा। झंग से रंगपुर करीब सत्तर मील दूर था। खेड़े रास्ते में पड़ाव डालते हुए और शिकार खेलते हुए जा रहे

1. इस तख्त हजारे के भोले-भाले लड़के पर तरह-तरह के रंगीन जाल डालती हैं।
2. शादी से पहले दुल्हिन को रस्मी तौर पर एक कोने में बैठा दिया जाता है।
3. हीर, लुक-छिप कर और भगा कर ले जाने से इश्क का कोई मजा नहीं रहता।

थे। रांझा, डोली से कुछ दूर हीर का संदूक उठाए चल रहा था। हीर ने गले का हार तोड़ कर मोती डोली से बाहर फेंक दिए और इशारे से रांझे को मोती बीनने के लिए कहा। जब वह मोतियों की मुट्ठी भर कर हीर को देने लगा तो उसके नैनों में मोतियों के गुच्छे देख कर हीर ने कहा :

लै वे रांझिया जोर मैं ला थक्की,
मेरे वस थीं गल बेवस होई ।
फड़ के मां पियां, काज़ीआं बन्न तोरी,
साडे नाल केडी खरखस होई ।
जिऊंदे कहे तां मिलांगे फेर बेली
हाल साल तां दोस्ती बस होई ।[1]

लेकिन जब निराशा और उदासी का जोर कुछ मद्धिम पड़ा तो हीर ने कहा : "घबराने की जरूरत नहीं, मैं खेड़े को कभी भी कबूल नहीं करूंगी, तू फौरन जोगी का भेस बना कर रंगपुर पहुंच। पहले ही तूने मेरी बात न मान कर इतनी आफत बुलाई है। अब देर न करना, हाथ से वक्त न गंवा बैठना।"

[2]

डोली रंगपुर खेड़े जा पहुंची। सैदे के बाप अज्जू ने बड़ी खुशियां मनाईं। हीर के हुस्न की धाक पहले से ही जमी थी, सारा गांव उसे देखने के लिए टूट पड़ा। लेकिन यह तो कोई विरली आंख ही देख सकती थी कि हीर के हुस्न को तीव्रता प्रदान करने वाली चीज खुशी नहीं थी, बल्कि गम की महीन और अदृश्य रेखा थी। सबसे पहले सैती ने इस रेखा को देखा। बेशक देखने में सैती बड़ी शोख और तेज-तर्रार थी, लेकिन भीतर ही भीतर वह दर्द की मारी थी। उसे भी मुराद बलोच ने घायल कर रखा था ! सो इश्क के वैसे ही अनुभवों से गुजरने के कारण उसने हीर का दर्द बंटाना शुरू कर दिया। सैदे खेड़े ने बड़े जतन किए कि किसी तरह हीर उसके साथ बात करे, लेकिन हीर तो शुरू से ही रांझे की अमानत हो चुकी थी। कई कथाकारों के अनुसार, जब सैदा हीर के नजदीक आता तो पंज-पीर उसे धकेल कर दूर फेंक देते थे। इसलिए उसके मन में इतना खौफ छाया था कि उसने हीर की तरफ रुख करना ही छोड़ दिया था।

बहुत दिनों तक तो हीर को रांझे की कोई खबर न मिली। उसकी उदासी दिनों-दिन बढ़ने लगी। वह सारा-सारा दिन खटपाटी लिए पड़ी रहती थी। सारे गांव में मशहूर हो गया कि हीर किसी भूत-प्रेत की पकड़ में है। जब बहुत दिनों तक रांझे की कोई खबर न मिली

---

1. ले रांझा, मैं अपना सारा जोर लगा कर थक गई हूं। अब बात मेरे वश से बाहर चली गई है। मेरे मां-बाप और काजियों ने जबरदस्ती बांध कर मुझे रवाना कर दिया है, मेरे साथ कितनी बेइंसाफी हुई है। हे मेरे मीत, अगर जिंदा रहे तो फिर मिलेंगे, फिलहाल तो हमारी दोस्ती खत्म हुई।

तो हीर ने झंग सियालों के यहां ब्याही एक लड़की से, जो मायके जा रही थी, रांझे को ताकीद कर भेजी कि 'मियां, प्रीत को मत झुठलाना और जोगी बन कर जल्दी पहुंच।' हीर की सहेलियों ने भी रांझे की हिम्मत बढ़ाई और वह जोग की दीक्षा लेने के लिए नाथ के टीले की तरफ चल पड़ा।

जब वह टीले पर पहुंचा तो गुरु बालनाथ उसकी जवानी और खूबसूरती को देख कर दंग रह गया। वहां कई लड़के लगातार कई वर्षों से जोग की दीक्षा पाने की आशा में उसकी सेवा करते रहते थे। जब बालनाथ ने रांझे को फौरन ही जोग की दीक्षा देना स्वीकार कर लिया और अपने चेलों को रांझे के लिए मुंदरें तैयार करने का हुक्म दे दिया तो वे ईर्ष्या से जल उठे। लेकिन सर्वज्ञ गुरु का दिल रांझे की आस्था से परिचित था। उसे मालूम था कि सच्चे इश्क की कमाई ने रांझे को पहले से ही जोग की ऊंची मंजिलों तक पहुंचा दिया था। वह जोगी तो पहले ही था, उसे तो अब सिर्फ जोगी के भेस की जरूरत थी। फिर भी बालनाथ ने दीक्षा देते समय रस्मी तौर पर रांझे को जोग की मर्यादा के बारे में बताया, और कहा, ''वड्डी माऊं बराबर जाणनी आं, अते भैन बराबर छोटड़ी नूं।''[1] लेकिन रांझे ने बालनाथ से साफ कह दिया कि मैं इस शर्त को नहीं मान सकता, क्योंकि मैं तो हीर की खातिर ही जोग धारण कर रहा हूं। यह सुन कर बालनाथ का दिल पिघल गया और रांझे को मूंज की माला, टोपी, छल्ला, खपरी और सिंगी देकर टीले से विदा किया। जब रांझा आंखों से ओझल हो गया तो बालनाथ ने उस शिला को नमस्कार किया, जिस पर बैठा कर उसने रांझे को जोग दिया था। यह शिला अभी तक जोगियों के टीले पर रखी है और वहां आने वाले यात्री आज तक उसे नमस्कार करते हैं।

जब रांझा नये भेस में टीले पर से उतरा तो उस पर इतना हुस्न चढ़ा था कि उसकी तेजस्विता से आंखें चकाचौंध हो उठती थीं। रांझा मंजिलें तय करता हुआ रंगपुर में आ गया। वहां एक चरवाहा भेड़ें चरा रहा था। उसने रांझे को फौरन पहचान लिया। पहले तो रांझे ने परों पर पानी न पड़ने दिया, लेकिन चरवाहे के मुंह से अपनी पूरी प्रेम-कहानी सुन कर वह हैरान रह गया। वह सोचने लगा कि उनके इश्क की कहानी भला कैसे सारे इलाके में फैल चुकी थी ! फिर चरवाहे से रंगपुर की पर्याप्त जानकारी लेकर वह रंगपुर आ गया। जब वह पानी पीने के लिए गांव के कुंए के पास रुका तो उसकी मोहिनी सूरत देख कर गांव की लड़कियां हैरान रह गईं और देखते ही देखते रांझे के गिर्द विवहिता और क्वांरी लड़कियों का झुंड इकट्ठा हो गया। उनमें हीर की ननद सैती भी थी।

घर आ के ननान ने गल्ल कीती,
भाबी इक जोगी नवां आया नी ।
कन्नी उसदे दरशनी मुंदरां ने,
गल हैंकला अजब सुहाया नी ।

---

1. अपने से उम्र में बड़ी औरत को मां बराबर और अपने से छोटी को बहन समझना।

फिरे भटकदा विच्च हवेलियां दे,
कोई उसने लाल वेंजाया नी ।[1]

सैती की बात सुनते ही हीर का दिल धड़कने लगा। उसने सोचा, हो सकता है, रांझा ही जोगी बन कर आ गया हो। उसका दिल चक्र की तरह ऊपर-नीचे हो रहा था। उसका रोम-रोम रांझे के लिए तड़पने लगा। सय्यद वारिसशाह ने हीर की इस दशा का बड़े कोमल और दर्द-भरे शब्दों में बयान किया है :

मुट्ठी मुट्ठी अे गल्ल ना करो भैना,
मैं ते सुणदेयां ही लुढ़ गई जे नी ।
तुसां अे जदोकणी गल्ल कीती,
मेरे धुर कलेजड़े पई जे नी ।
फिरे पोस्त, धतूरा ते भंग पींदा,
मौत उसने मुल्ल क्यों लई जे नी ।
जिस भाऊं दा पुत्त फकीर होया,
दित्ता रब्ब दा ओह सह गई जे नी ।
जिसदे भिन्नड़े यार हो दे कन्न पाटे,
ओह तां न ढढड़ी चौड़ गई जे नी ।[2]...

लेकिन यह तो हीर का अनुमान था। वह बार-बार यही सोच रही थी, 'खुदा-न-खास्ता अगर यह रांझा हुआ तो मैं बर्बाद हो गई, इसने मुझे कहीं का न रखा।' सैती को भी अभी मालूम नहीं था कि वह रांझा ही है। अगले दिन जब रांझा खेड़ों की हवेली में खैर मांगने आया तो सैती के साथ उसकी करारी झड़पें हुईं। हीर उधर पीठ दिए सब कुछ सुनती रही, आखिर सैती ने रांझे को चुनौती दी, "अगर तू सचमुच का जोगी है तो मेरी भाभी का रोग बता।" रांझे ने हीर और चाक की कहानी सुनानी शुरू कर दी, बातों ही बातों में सैती और मुराद की मुहब्बत की तरफ भी इशारा किया। यह सुन कर सैती कुछ नर्म हुई, लेकिन उसने झूठ-मूठ नौकरानी को आवाज दी, "नी ! इसको भीख दे, हमारा पीछा छोड़े।" रायबां मुट्ठी भर चावल ले आई, लेकिन जब वह रांझे को भिक्षा डालने लगी तो उसने अपना भिक्षा-पात्र हाथ से छोड़ दिया। चावल गिर कर सारे आंगन में बिखर गए। रांझे ने हीर से बात करने का मौका पैदा करने के लिए ही ऐसा किया था। हीर ने जोगी की तरफ मुंह मोड़ा और रांझे को सामने देख कर उसकी प्रेमनिष्ठा पर बलिहारी जाने लगी। हीर ने सैती

---

1. घर लौट कर ननद ने बताया, भाभी एक नया जोगी आया है। उसके कानों में छल्ले हैं, गले में कंठा खूब फब रहा है। वह हवेलियों में इस तरह भटक रहा है, जैसे कोई कीमती लाल गंवा बैठा हो।
2. बहन, मुट्ठी-मुट्ठी बात न करो। मैं तो सुन कर ही बर्बाद हो गई। जब से तुमने यह बात की है, मेरे कलेजे में जा लगी है। जोगी ने पोस्त, धतूरा और भांग पी-पीकर मौत क्यों मोल ले ली है ? जिस मां का बेटा फकीर हो गया, वह रब्ब की मर्जी को कैसे झेल गई ! जिसके सुंदर प्रेमी के कान फटे हैं वह लड़की तो बर्बाद हो गई समझो।

के सामने अपने दिल की सारी बात खोल दी। ननद और भौजाई ने मिल कर अपने प्यार को सफल बनाने के लिए सोचना शुरू कर दिया।

रांझे काले बाग में डेरा जमाए हुए था। वह जोगियों की तरह कभी तो बहुत नरमी से पेश आता था, कभी बड़ा विकराल रूप धारण कर लेता था। कइयों की मुरादें पूरी करता था और आधारी उठा कर कइयों के पीछे पड़ जाता था। सैकड़ों औरतों ने उसे अपने हृदय की वेदना बताई और उसका इलाज पूछा। आखिरकार हीर भी अपनी बीमारी का इलाज करवाने के बहाने रांझे से मिलने गई। रांझा बदन पर भभूत मले, धूनी के सामने बैठा था। वह हीर को देख कर उठ खड़ा हुआ और हीर ने—

अव्वल पैर पकड़े ऐतकाद कर के,
फेर नाल कलेजे दे लग्ग गई ।
नवां तौर अजूबे दा नजर आया,
देखो जल पतंग ते अग्ग गई ।
कही लग गई, चिनग वग्ग गई,
खबर जग्ग गई, वज ध्रग गई ।
यारो ठग्गां दी रेवड़ी हीर जट्टी,
मुंह लगदेयों जोगी नूं ठग्ग गई ।
अग्गे धुआं, धुखाया जोगियों दा,
हुन फूक के झुगड़े अग्ग गई ।[1]

जब हीर काले बाग से घर मुड़ी तो उसने सैती से कहा, "कोई ऐसी तदबीर करें कि तुझे तेरी मुराद मिल जाए और मुझे मेरा साजन। हम दोनों की जवानी हाथों से निकली जा रही है। मेरा रोज-रोज काले बाग जाना अच्छा नहीं। कोई ऐसा चलित्तर करें कि घर बैठे ही साजन के दर्शन हो जाएं।..."

खैर, हीर और सैती की सलाह पक्की हो गई। सैती ने अपनी मां को इस बात के लिए राजी कर लिया कि हीर की सेहत के लिए उसका बाहर घूमने-फिरने जाना जरूरी है। अगले दिन सुबह ही सैती, हीर और उसकी सहेलियां कुएं पर पहुंचीं। हीर ने कीकर का बड़ा सा कांटा अपने पैर में चुभो लिया, फिर सैती और उसकी सहेली ने शोर मचा दिया कि हीर को सांप ने काट लिया है। हीर दांत भींच कर जमीन पर लेट गई। उसने दम साध लिया, देखते ही देखते उसका रंग नीला-पीला पड़ गया। पल भर में सारा गांव इकट्ठा हो गया। हीर को चारपाई पर लिटा कर घर ले आए। कई सयाने और मदारी बुलाए गए, लेकिन कोई फायदा न हुआ। सैती ने कहा, "काले बाग में एक जोगी उतरा हुआ है, बड़ा

---

1. पहले बड़ी श्रद्धा से पैर छुए, फिर कलेजे से लग गई। एक नया अजूबा दिखाई दिया, आग पतंगों पर जल गई। एक चिनगारी ऐसी फूटी कि सारी दुनिया को खबर हो गई। नगाड़े बजने लगे कि ठगों की सरदार हीर जट्टी जोगी के सामने आते ही उसे ठग कर ले गई। एक तो पहले से ही जोगी की धूनी जलाई थी, अब इस आग ने सारे घर को फूंक डाला।

सिद्ध और पहुंचा हुआ मालूम होता है।" लड़कियों ने सैदे को जोगी के पास भेजा, लेकिन वह आधारी लेकर सैदे पर इस तरह झपटा कि सैदा थर-थर कांपता हुआ घर औट आया। अंत में सैदे का बाप अज्जू खुद जोगी के पास गया। जोगी भी दिल से यही चाहता था, मान गया। फिर क्या था :

मंतर इक ते पुतलियां दो उड्डन,
अल्ला वालेयां खेल रचाया ई ।
खिसकू शाह होरी अज आन लत्थे,
तंबू आण उघालुआं लाया ई ।[1]
(वारिस शाह)

सैती ने सारा प्रबंध अपने हाथ में ले लिया और गांव से बाहर डोमों की कोठरी में जोगी का डेरा लगवा दिया। जोगी महाराज ने कहा : कोठरी में बस सिर्फ दुल्हिन हो, या फिर एक क्वांरी लड़की हो। बाकी सब चले जाएं। दुल्हिन को किसी बेहद जहरीले नाग ने काट खाया है :

ना अे फनीअर ना अे तिलियर,
ना वैशक कौड़ों होई ।
ना अेह कक्कड़ ना संगचूड़न,
अेना विच्चों ना कोई ।
अे तां खाधी चोटियाले बिसीयर
यैथों छुट्टण मुश्कल होई ।[2]
(दामोदर)

यह सुन कर सब लोग भयभीत होकर वहां से चले गए। जोगी, सैती और हीर अकेले रह गए। आधी रात के वक्त रांझे ने पीरों को याद किया। पीर बहाऊलदीन जकरिये ने धमाके से दीवार गिरा कर रास्ता बना दिया। जब हीर और रांझा कोठरी से निकल कर चल पड़े तो सैती ने कहा, "मेरा साजन भी मिलाओ।" रांझे ने फिर पांचों पीरों को याद किया। मुराद बलोच की सांडनी छन-छन करती आ गई।

[3]

जब सुबह हुई तो खेड़े दो दल बना कर हीर और सैती के पीछे भागे। पहला दल तो बलोचों से दांत तुड़वा कर भाग आया, लेकिन दूसरे दल ने जाकर रांझे को पकड़ लिया। उन्होंने रांझे को मार-मार कर अधमरा कर दिया और हीर को अपने साथ ले गए। रांझे ने राजा

---

1. मंतर एक था, लेकिन पुतलियां दो नाचती थीं, अल्लावालों ने कैसा खेल रचाया है ! खिसकू शाह आज पधारे हैं, औरत भगाने वालों ने खेमा गाड़ दिया है।
2. न यह फनियर है, न तिलियर है, न वैशक है। यह कक्कड़ और संगचूड़न में से भी नहीं है। इसे तो चोटी वाले बिसिअर ने खाया है। मेरे लिए जहर निकलवा पाना मुश्किल हो रहा है।

अदली के सामने जाकर फरियाद की। राजा अदली ने अपने आदमी भेज कर हीर और खेड़ों को बांध कर अपने सामने मंगवाया। खेड़ों ने कहा, "महाराज, यह कोई ठग है, हमने इसे मदारी समझ कर अपनी बहू के इलाज के लिए बुलवाया था, लेकिन यह तो लड़की को ही लेकर चंपत हो गया।" राजा ने हीर को खेड़ों के हवाले कर दिया। यह अन्याय देख कर रांझे ने 'आह' का नारा मारा। इस पर चारों तरफ से शहर को आग लग गई। रांझे के चमत्कार को देख कर राजा को उसकी सच्चाई पर विश्वास हो गया। उसने हीर को रांझे के हवाले कर दिया और खेड़े रोते-पीटते रंगपुर लौट आए।

हीर और रांझा कुछ दिन पहाड़ी इलाकों में घूमते रहे, आखिरकार दोनों ने झंग लौटने का फैसला किया। जब वे झंग की सीमा में दाखिल हुए तो गांव के चरवाहों ने चूचक के घर जाकर खबर दी। वे लोग आकर हीर-रांझे को अपने साथ घर ले गए। उन्होंने रांझे के कानों से छल्ले उतरवा दिए, उसकी जटाएं मुंड़वा दीं, दूध-चावल खिलाए, बैठने के लिए रंगीन पलंग बिछा दिया। लेकिन यह सारी खातिरदारी दिखावे की थी। भीतर ही भीतर वे बदनामी के डर से मरे जा रहे थे। आखिर उन्होंने मक्कारी का जाल बिछाया और रांझे से कहा, "ऐसे अच्छा नहीं लगता। तुम तख्त हजारे जाकर बारात सजा कर आओ और हीर को बाकायदा ब्याह कर ले जाओ।" रांझा फौरन तख्त हजारे चला गया। वह रास्ते में सोचता जा रहा था कि अब भाभियों के सारे ताने उतार दूंगा, लेकिन होनहार कुछ और ही था।

पीछे से मां-बाप ने हीर को जहर देकर मार दिया और रांझे को संदेश भिजवाया कि हमारी मरजी तो कुछ और थी, लेकिन रब्ब की रजा कुछ और ही निकली। रांझे के हाथ में चिट्ठी देते वक्त, पत्रवाहक फूट-फूट कर रोने लगा; उसने सिसकते हुए बताया कि हीर तो रब्ब को प्यारी हो गई।

यह सुनते ही रांझे ने आह भरी और जान दे दी।

[4]

हीर की कहानी सबसे पहले दामोदर कवि ने लिखी थी। वह झंग का पटवारी था और उसने जगह-जगह लिखा है, "आख दमोदर असां अक्खीं डिट्ठा जो सिर सलेटी दे बीती।"[1] दामोदर ने हिंदू परंपरा के अनुसार कहानी को दुखांत नहीं बनाया, उसकी कहानी के अंत में हीर और रांझा हज करने के लिए मक्का चले जाते हैं। वैसे भी दामोदर का रांझा, वारिस के रांझे की तरह, तंदुरुस्त और पंजाबी मालूम नहीं होता, बल्कि कृष्ण महाराज की तरह मुरलीमनोहर और गहने पहनने वाला बाल-गोपाल ही है। जब धींवरी मस्जिद में जाती है तो रांझे के लोभरहित हुस्न को देख कर कहती है :

---

1. कवि दामोदर कहता है, सलेटी (हीर) पर जो बीती, वह हमने अपनी आंखों देखी।

देख विकाणी झीवरआनी,
कदम उठीवस नाहीं।
हे ! जे चुख वडेरा होवे,
तां आप वियाह करांई।[1]

लेकिन दामोदर के विपरीत वारिसशाह ने किस्से को दुखांत बनाया है। शिया मुसलमान होने के कारण वारिसशाह को दुखांत का अनुभव अधिक था। इसलिए उन्होंने इस किस्से को दुखांत बना कर कहानी को अधिक तीव्र बना दिया है।

कई लोग हीर की कहानी को काल्पनिक समझते हैं। लेकिन झंग में हीर का मकबरा आज तक कायम है, और आज तक 'माई हीर' कह कर उसका सम्मान किया जाता है। यह मकबरा सिद्ध करता है कि इस कहानी के रूप में भले ही थोड़ा-बहुत परिवर्तन हुआ हो, लेकिन यह घटी जरूर है। फिर पंजाबी मानस पर इस कहानी का इतना असर है कि रांझा और हीर न सिर्फ सांसारिक प्रेम के प्रतीक बन गए, बल्कि वे आत्मा और परमात्मा के प्रतीक के रूप में भी माने जाने लगे हैं।

1. इसे देख कर ही धींवरी बिन मोल बिकने को तैयार है। कदम नहीं उठाया जाता। अगर हो तो मैं खुद इससे शादी करवाऊंगी।

मिरजा साहिबां

गुरबख्श सिंह

मटकती-झूमती एक लड़की तेज चाल चलती हुई एक दरवाजे के सामने खड़ी होकर आवाज देती है। भीतर से उसी की उम्र का एक लड़का जल्दी से निकलता है और 'ना, ना' करती लड़की से उसका बस्ता लेकर अपने बस्ते के साथ उठा लेता है, और दोनों चल पड़ते हैं।

''लेकिन मिरजे, तू मुझे अपना बस्ता क्यों नहीं उठाने देता ?''

''जब मैं तुम्हारा बस्ता उठाता हूं तब तो मेरा मस्जिद में जाने को जी चाहता है, वैसे मुझे पढ़ाई पसंद नहीं है,'' लड़के ने भोलेपन से जवाब दिया।

''लेकिन मैं तुमसे कहती हूं कि तुम पढ़ा करो। मुझे पढ़ाई में बड़ा मजा आता है। आजकल मैं एक बड़ी मजेदार किताब पढ़ रही हूं।'' कह कर लड़की ने अपने साथ सट कर चलते हुए साथी की कमर के गिर्द अपनी बांह डाल दी।

''अच्छा साहिबां, जैसे तू कहे, मैं पढ़ा करूंगा, लेकिन मौलवी जो पढ़ाता है वह मेरी समझ में बिलकुल नहीं आता।'' अपनी पसलियों से लगे हाथ की उंगलियां वह मन ही मन गिन रहा था।

मौलवी आया और चबूतरे पर बैठ गया। मौलवी ने जमात में मिरजे की तरफ देखा जो साहिबां की दाईं तरफ अन्यमनस्क भाव से बैठा था।

''साहिबां, अपने इस साथी में भी पढ़ने का शौक पैदा करो— देखो तो सही, यह कैसे गुमसुम, पत्थर-सा बैठा है ! मस्जिद से बाहर तो यह बड़ा चुस्त रहता है।''

''जी, मैंने इसे आज समझाया था कहता था, आज से पढ़ा करूंगा।''

''सुन, ओये मिरजिया ! अगर कल भी तू मुझे इसी तरह पत्थर की सी शक्ल बनाए बैठा दिखाई दिया तो मैं तेरे बाप को संदेश भेजूंगा कि वह तुझे अपने साथ दानाबाद ले जाए। यहां तुम खामख्वाह अपना और मेरा वक्त बरबाद कर रहे हो।''

''मौलवी जी ! आप एक हफ्ता और देख लें,'' साहिबां बोल उठी, ''मैं बुआ बीबो के घर जाकर इसे पढ़ाया करूंगी। इसके मन में अभी पढ़ाई का शौक ही नहीं पैदा हुआ। वैसे यह सयाना तो बहुत है।''

मस्जिद से छुट्टी मिलते ही साहिबां मिरजे के साथ बुआ बीबो के घर गई और उसे

मौलवी की कही बात सुनाई। कई बार बीबो भी मिरजे से पढ़ने के लिए कह चुकी थी। लेकिन जो बात उसने आज कही, उसका लड़के के दिल पर गहरा असर हुआ।

"बेटा, अगर मौलवी ने भाइये चौधरी को लिख ही दिया तो वह सोचेगा कि मैंने तुम प्र ध्यान नहीं रखा। वह दो दिनों के अंदर ही आकर तुझे ले जाएगा। मैं सारी उमर बहन-भाइये के सामने शर्मिंदा रहूंगी।"

बीबो के घर कोई औलाद नहीं हुई थी, इसलिए उसने बहन से मिरजे को मांग लिया था और फिर सियालों का मौलवी भी अच्छा माना जाता था। साहिबां मिरजे के मामा की लड़की थी।

"और बुआ ! फिर मेरी पढ़ाई भी ठप्प हो जाएगी।" साहिबां ने कहा, "मां तो पहले ही कहती है कि मैं अब सयानी हो गई हूं। मुझे अब मस्जिद में नहीं जाना चाहिए— मैं उससे कहती हूं कि मिरजा जो मेरे साथ होता है, तब इस पर वह मान जाती है। बाद में वह भी नहीं मानेगी।"

मिरजा जैसे बड़ी गहरी चिंता में डूब गया।

"बोल बेटा !" मौसी ने बड़े भावुक स्वर से कहा, "तू यहां है, तभी तो मेरा सूना घर बस गया है। एक साल मेरी खातिर ही मन मार कर पढ़ ले, मैं बहन के सामने तो सच्ची हो जाऊं।"

प्यार से झकझोरे गए मिरजे ने साल भर की कसर एक महीने के भीतर ही पूरी कर ली। मौलवी ने कई बार जमात में मिरजे को थपथपाया था।

इससे पहले उसे पूरे दिन में सिर्फ एक ही बात अच्छी लगती थी, वह थी साहिबां के साथ मस्जिद जाना और वापिस लौटना। अब उसका सारा दिन अच्छी बातों से भर गया था— मौसी भी खुश थीं, मौलवी भी खुश और साहिबां...वह हर रोज उसके घर आती थी, स्कूल से मिला सबक वह दिन भर याद करता रहता, उस वक्त उसे ऐसा महसूस होता जैसे साहिबां उसके पास ही बैठी हुई है।

पहले उसे सपना आया करता था कि वह साहिबां का बस्ता उठाए चल रहा है और अपनी कमर के गिर्द लिपटे उसके हाथ की उंगलियों को गिनता जा रहा है। मस्जिद अभी दूर है, वे चले जा रहे हैं, उसके भीतर कोई अनोखी खुशी भर जाती है, जब वह भीतर न समा सकती तो उसकी नींद खुल जाती।

अब उसे और तरह का सपना आने लगा था—साहिबां उसे पढ़ा रही है, किताबें खत्म होती जा रही हैं...आखिरी किताब रख कर साहिबां उसकी रौशन आंखों में देखती है और मिरजे का हाथ पकड़ कर कहती है—"मैं तुझे और क्या पढ़ाऊं ? मुझ सारी की सारी को तो तूने पढ़ लिया है।" साहिबां की उंगलियों के स्पर्श से उसके भीतर अनेक सबक रचे चले जा रहे थे— उसकी नींद खुल जाती है। लेकिन जागने की हालत को सपने के मुकाबले में फीका देख कर वह फिर आंखें मूंद लेता। "क्यों मिरजिया ! अभी पढ़-पढ़ कर तुम्हारा पेट नहीं भरा, फिर आ गए हो ?" उसे साहिबां का हंसता हुआ चेहरा दिखाई

देता और वह कहता, "मैं पढ़ने नहीं आया— तेरे साथ थोड़ी देर बैठ कर उड़ने को जी चाहता है, घोड़ी लेकर आया हूं, साहिबां, मेरे पीछे बैठ जा।" और वह जमीन पर नहीं, आसमानों में उड़ते रहते थे।

वह साल मिरजे और साहिबां की उम्र का बहुत मीठा साल था। दिन की हसरतें रात को सितारे बन कर सपनों में टिमटिमाती थीं, जमीन-आसमान रंगे गए थे। दो बाल-आत्माएं— एक का हाथ दूसरे के कंधे पर, दूसरी का हाथ पहले की कमर के गिर्द— ये रूहें जवानी के मस्ताने गुलिस्तां में दाखिल हो रही थीं।

मिरजे के बाप को खबर मिली कि लड़का पढ़ाई में अच्छा चल रहा है। वह एक दिन बेटे को देखने के लिए आया। लड़के के हृष्ट-पुष्ट शरीर को देख कर उसके अंदर एक और ही किस्म की तड़प उठी। 'इसे जवानों के हुनर में निपुण बनाऊंगा।' उसने सोचा, 'तीरंदाजी और घुड़सवारी में इसका कोई सानी न हो— कोई दुश्मन कान तक न हिला सके।'

उसने अपनी साली बीबो से बात की। बीबो ने सलाह दी कि अभी मिरजे को एक बरस तक और पढ़ाना चाहिए।

"नहीं बीबो," बिंजल खरल ने सिर हिला कर कहा, "बहुत पढ़ लिया है। जमीनों वालों के दुश्मन बहुत होते हैं। मुझे ऐसा दिखाई दे रहा है कि इस लड़के पर धूम मचाने वाली जवानी चढ़ रही है— इसे मैं तेग-जन, तीरंदाज बनाऊंगा, शहसवार बनाऊंगा।"

मिरजे के दानाबाद जाने की बात पक्की हो गई, लेकिन साहिबां ने अपने बिंजल फूफे को इस बात के लिए राजी कर लिया कि वह मिरजे को दो दिनों के लिए अपने घर ले जाएगी।

दो दिन वे क्षण भर के लिए भी एक-दूसरे से अलग न हुए। दोनों ने एक साथ बैठ कर रोटी खाई।

"साहिबां, अपनी किताब में से मुझे वे कहानियां सुना जो तुझे अच्छी लगती हैं।" मिरजे ने फरमाइश की। साहिबां किताब निकाल लाई। किताब के पन्ने उलट-पुलट कर उसने एक कहानी सुनाई। किसी प्यार की पुतली शहजादी की कहानी थी।

"यह कहानी तो तूने इस तरह पढ़ी है जैसे यह तेरी अपनी ही कहानी हो," बुत बना मिरजा कहानी खत्म होने पर चौंक पड़ा।

"मिरजा, तू भी बड़ा वैसा है !" साहिबां ने उसकी ठुड्डी पर उंगली रख कर इस अंदाज में कहा जो बच्ची से यकायक जवान होती प्यार में डूबी किसी लड़की का अंदाज हो सकता है।

"साहिबां ! और कहानी सुना।" साहिबां की योग्यता से रश्क करते हुए मिरजे ने मिन्नत की। एक, दो, तीन नहीं, पूरी चार कहानियां साहिबां ने सुनाईं। सुनाते-सुनाते दिल में न जाने क्या आया, उसने किताब बंद कर दी और मिरजे के कंधे पर हाथ रख कर पूछने लगी, "अरे मिरजे, बता, कभी साहिबां को याद भी करेगा ?"

बंद कमरे की खिड़की सपाट से खुल जाने पर रौशनी की बाढ़ जिस तरह आंखें चुंधिया देती है, भीतर से थिरकते लड़के के होंठों में से कोई जवाब न निकल सका।

"तो क्या मिरजा, तू मुझे बिलकुल ही भूल जाएगा ?" मन ही मन सब कुछ जानते हुए भी साहिबां ने ऊपर से बन कर पूछा।

"साहिबां, भला मैं तुम्हारी किस बात को भुला सकूंगा ?" आखिर होंठ खुल ही गए।

साहिबां ने उन होंठों की तरफ देखा— उनमें हल्का सा कंपन था। होंठों से ऊपर उसने आंखों में देखा, उनमें पतला सा पानी था, कहीं आंसू न फूट निकलें, साहिबां ने उसे बातों में लगाने के लिए पूछा, "भला बता, मेरी कौन सी बात तुझे सबसे ज्यादा याद रहेगी ?" और वह अपने दोनों हाथों से मिरजे की हथेली सहलाने लगी।

"अपनी कमर के गिर्द तुम्हारा हाथ...नहीं, नहीं, मुझे पढ़ाने के लिए तेरा आना— नहीं, यह भी नहीं— सबसे ज्यादा तुम्हारा यह पूछना कि रात को मैंने कौन सा सपना देखा था, और सुन कर तेरा मुंह जैसा बन जाता था, वह हमेशा मेरी आंखों के सामने रहेगा...नहीं साहिबां, नहीं— सच बताऊं— मैं नहीं जानता, मैं तुम्हारी कौन-कौन सी बात याद करूंगा— लेकिन मुझे मालूम है कि मैं तुम्हें कभी भी भुलाऊंगा नहीं।"

अगले दिन सुबह नाश्ता खाकर बिंजल खरल घोड़ी पर चढ़ तैयार हो गया। मिरजा मौसी से गले लग कर अपनी जेब में से अपना चाकू निकाल कर साहिबां को बतौर अपनी निशानी के दे रहा था कि उसके बाप ने उसे जल्दी करने के लिए कहा। मुश्किल से कदम उठाता और बार-बार साहिबां की तरफ देखता हुआ मिरजा बाप के पीछे घोड़ी पर बैठ गया।

दानाबाद पहुंचते ही बिंजल खरल ने घुड़सवारी, तीरंदाजी, तेगजनी के एक माहिर उस्ताद के हाथ मिरजे को सौंप दिया।

उसकी सवारी के लिए उसके बाप के अस्तबल में से एक घोड़ी चुनी गई। उड़ना इस घोड़ी का स्वभाव था। हर आदमी इसकी सवारी नहीं कर सकता था, लेकिन घोड़ी ने मिरजे को पहली नजर में ही स्वीकार कर लिया।

साल बीतते गए। अपने सपनों की घोड़ी की सवारी तो मिरजे को मिल गई। वह सोचता, उसके सपनों की मलका न जाने कब इस घोड़ी पर चढ़ेगी ? इस मलका ने मिरजे को 'अलिफलैला' की किताब निशानी में दी थी। वह साहिबां से सुनी हुई कहानियां किताब में से पढ़ता और उस रात वह कहानी का शहजादा बन जाता, घोड़ी पर सवार होकर वह साहिबां की तलाश में उड़ता फिरता...

कई बार उसके जी में आया कि वह सियाल की तरफ जा निकले— उसे खबरें पहुंचती थीं कि सियालों में हुस्न की बहार आ रही है।

साहिबां जवान हो गई, जिंदगी सागर बन कर लहरों से भर गई। वह बुआ बीबो के

घर रोजाना जाती थी। बुआ कई बार दानाबाद हो आई थीं, मिरजे से मिल आई थीं...। "कितना खूबसूरत निकला है !" बुआ के मुंह से सुन कर उसे नशा चढ़ जाता था। "बुआ, तूने उससे कभी नहीं कहा कि घड़ी भर के लिए वह सियाली हो आए ?"

"वह तो आने के लिए तरस रहा था— लेकिन भाई खां के सिर पर खब्त सवार है कि दुनिया में मिरजे जैसा शहसवार, तीरंदाज, तेगजन और कोई न हो— उसके उस्ताद हर वक्त उसके साथ चिपके रहते हैं।"

"बुआ, क्या उसे याद है कि कभी मैं भी उसकी उस्ताद थी ?" साहिबां पूछती।

"याद पूछती है ? वह तेरी किताब उठा कर मेरे पास लाया— तूने ही उसे यह किताब दी थी। कहता था, 'घड़ी की फुर्सत निकालूं या पल की फुर्सत निकालूं, एकाध कहानी मैं रोज पढ़ लेता हूं। बुआ, तू साहिबां को यह बात बता देना'।"

रात को कितनी-कितनी देर तक साहिबां सो नहीं सकती थी। वह सोचती रहती थी, मिरजा कैसा लगता होगा, अगर वह अब आए, तो क्या अब भी वह उसकी कमर के गिर्द अपनी बांह डाल सकेगी ? अगर अब मिरजा उसके कंधे पर हाथ रख दे तो उसे कैसा लगेगा— उसका सारा जिस्म थर्रा उठता। फिर उसकी आंख लग जाती, मिरजा आ जाता, और उसे घोड़ी पर चढ़ा कर बादलों से ऊपर उड़ जाता।

साहिबां की शादी की बातें होने लगीं। कइयों को खयाल आया, और बीबो ने तो एक बार उसकी मां से भी कह दिया कि मिरजे जैसा लड़का ढूंढने पर भी नहीं मिलेगा। मां को भी यह बात अच्छी लगी, उसने साहिबां के दादे खीवा खां की मर्जी पूछी। लेकिन खीवा खां बहुत दूरदर्शी आदमी था। "भोली मलकी, हमारे यहां एक ही तो बेटी है, इसके जरिये से कोई और बड़ा घर क्यों न अपनाएं— बिंजल का घर तो वैसे भी हमारा ही है। चंधड़ हमारे सानी हैं, कुछ अकड़े भी रहते हैं, उसका बेटा ताहिर जवान भी है— अगर इस घर में रिश्ता हो जाए तो समझ लो कि सारा इलाका ही अपना हो गया।"

बाबे की इस सलाह को सुन कर साहिबां बहुत बिलखी। बुआ बीबो के घर जाकर रोई, "बुआ, तू जाकर मिरजे से कह कि वह अपने मां-बाप से जोर डलवाए। यहां से तुम और फूफा हो जाओगे। फिर भी भला बाबा न मानेगा ?"

बीबो दानाबाद गई। बहन-बहनोई के साथ सलाह की, लेकिन बहन अपने बाप के स्वभाव से परिचित थी और बहनोई बड़ा स्वाभिमानी था। "चलो, खीवा चंधड़ों का स्वाद भी देख लें— बीबो, मैं तो उसके पास नहीं जाऊंगा।" बिंजल ने साफ 'न' कर दी।

आखिर बीबो ने मिरजे को समझाया, वह खुद जाकर कहे कि साहिबां पर उसका हक सबसे पहले है। "ओ सोहणे, जरा भी देर ना लगाना, नाई चंधड़ों के घर जाने ही वाला है, और साहिबां तो खाना-पीना सब भूल गई है।"

मिरजे को तीर-घोड़ियां—सब भूल गईं। मौसी के पीछे-पीछे वह सियाल में पहुंच गया।

साहिबां की हालत अजीब हो गई थी। उसने मन में इस मुलाकात के बारे में कई तरह

की कल्पनाएं कर रखी थीं, लेकिन मिरजे को देख कर न उसके हाथ उठे, न होंठ खुले, अचानक जैसे उसका सपना आंखों में से निकल कर सामने आ खड़ा हुआ था।

मिरजे ने उसकी तरफ देखा, जी में आया कि उसके कंधे पर हाथ रख दे, लेकिन यह कंधा पहले वाला कंधा नहीं था, उसका हाथ भी वह हाथ नहीं था, जिसे वह मिरजे की कमर के गिर्द रोज डाल देती थी...

''साहिबां !'' उसके मुख से सिर्फ इतना ही निकल सका।

''मिरजिया !'' वह सिर्फ इतना ही जवाब दे सकी।

वक्त निकाल कर हिम्मत करके मिरजे ने अपने नाना के साथ बात की, ''नाना जी, मैं आपका नाती तो हूं ही। अब मुझे आप अपना बेटा बना लीजिए, मैं साहिबां के साथ खेला हूं— पढ़ा हूं। उसका किसी दूसरे घर में जाना मेरा हक छीनना होगा।''

''बेटा मिरजिया, तू मुझे बहुत अच्छा लगता है। अगर साहिबां की एक भी बहन और होती तो मैं तुम्हारी बात कभी न मोड़ता। अब मैं चाहता हूं, चंधड़ों से रिश्ता करके बेफिक्र हो जाऊं। फिर कोई हमारी तरफ आंख उठा कर भी नहीं देख सकेगा— तुम लोग तो हमारे हो ही।''

मिरजे ने बड़े दावे से कहा, ''अब भी आपकी तरफ आंख उठाके देखने वाला कोई पैदा नहीं हुआ, क्या हुआ अगर मैं अपने बाप का एक ही बेटा हूं, मैं एक होकर भी ग्यारह जनों के बराबर हूं।''

''तेरा दिल तोड़ने का मुझे अफसोस है, लेकिन मैं नाई को उन लोगों के यहां भेज चुका हूं। अपनी बात झूठी नहीं पड़ने दूंगा,'' जिद्दी नाना ने बात ही खत्म कर दी।

मिरजा उठ कर मौसी के घर चला गया और उसने मौसी से कहा कि वह अपने घर में साहिबां के साथ उसका मेल करवा दे।

कई बरसों के बाद आज वह इसी घर में फिर साहिबां का इंतजार कर रहा था, लेकिन तब सिर्फ उसकी आंखें ही साहिबां की राह देखती थीं। आज उसे पता नहीं चल रहा था, उसका कितना कुछ साहिबां के लिए तड़प रहा था।

'साहिबां आ जाए...तब वह मुझसे लंबी थी, अब वह मेरे कंधों तक ही आती है, मैं उस पूरी की पूरी को अपने दिल में छिपा लूंगा।' और साहिबां आ गई। आज उसके पैरों में पाजेबें नहीं थी, तो भी मिरजे को लगा कि वह पहले से भी ज्यादा छन-छन कर रही है। उसे देख कर उसका अभी-अभी बनाया इरादा उसके दिल में धक-धक करने लगा।

जब वह नजदीक आई तो उसके होंठ भी न खुल सके। साहिबां ने धीरे से हाथ उसकी कमर के गिर्द रख दिया और मिरजे ने भी शरमाता सा हाथ उसके कंधे पर रख दिया। लेकिन दोनों हाथों में एक-दूसरे को आलिंगन में लेने की चाह शरमा रही थी।

साहिबां की नजर अनोखी थी। इस नजर में कुछ फड़फड़ा रहा था। उसकी आत्मा का पंछी पलकों पर लटका, उड़ने के लिए किसी दिल की मेहराब तलाश कर रहा था। पंछी को इस मेहराब का प्रतिबिंब मिरजे की आंखों में दिखाई दिया। फर्र-फर्र-फर्र ! पंछी

टहनी से फुदक कर मिरजे की बांहों में कसा गया।

जब बांहें खुलीं तो आंखों में कोई बेगानापन नहीं था। एक की आंखों में न सिर्फ दूसरे के नक्श थे, बल्कि एक-दूसरे की धड़कन भी सुनाई दे रही थी। सब कुछ कहना आसान हो गया, कुछ भी कहना मुश्किल न रहा।

"अब मिरजिया, तू क्या करेगा ?" साहिबां ने पूछा।

"तू मेरी है, इसी विश्वास की कसर थी, अब कोई माई का लाल ऐसा पैदा नहीं हुआ जो तुझे मुझसे छीन कर ले जाए।"

"लेकिन सुना है कि चंधड़ों के घर में बेटों की फौज है।"

"इन बांहों में पूरे लश्कर का जोर है।" मिरजे ने साहिबां के कंधों पर बांहें रख दीं।

"लेकिन मिरजिया, कहीं तुम्हें मेरे भाइयों से लड़ना न पड़े!" साहिबां का रंग फीका पड़ गया।

"नहीं साहिबां, वे मेरे भी भाई हैं। मेरे तीरों और मेरी घोड़ी के होते हुए मुझे किसी के साथ लड़ना नहीं पड़ेगा। किसी में हिम्मत ही नहीं होगी। लेकिन अगर मां-बाप की बदनामी से घबराना हो तो मुझे बता दे !" मिरजे ने बांहें उठा लीं।

"बदनामी तो वे खुद सहेज रहे हैं— मैं सिर्फ यही चाहती हूं कि मेरी वजह से उनमें से किसी को चोट न लगे। जिस पेड़ में से मैं फूटी, बड़ी हुई और तुम जैसे शहजादे की नजरों में पड़ी, मेरी तरफ से उस पेड़ का कुछ न बिगड़े।"

"फिर तू बेफिक्र रह। मुझे वक्त पर खबर मिल जानी चाहिए— समझ ले मैं और मेरी घोड़ी फौरन पहुंच गए।"

अगले दिन जब साहिबां के कान में भनक पड़ी कि नाई उसका रिश्ता चंधड़ों के यहां कर **आया** है तो उसके पंख कट गए। उसके अपने गांव में भी शादी की तैयारियां शुरू हो गईं, **और** ज्यों-ज्यों दिन नजदीक आते गए, साहिबां का दिल डूबता गया। पंद्रह दिन, चौदह दिन...एक हफ्ता; आधा हफ्ता— अब कल बारात आने वाली थी।

मिरजे की तरफ से कोई खबर नहीं आई। बीबो बुआ खुद जाकर मिरजे को सब कुछ बता आई थी। मिरजे ने कहा था, "साहिबां जरा भी फिक्र न करे।"

बारात आ पहुंची। साथ में कई मुजरे थे। सारा गांव राग-रंग में मस्त हो गया। सिर्फ साहिबां और बीबो के कलेजे धड़क रहे थे। राह देख-देख कर आंखें थक गई थीं। अब शाम भी काफी गहरी पड़ गई थी।

इसी वक्त मुंह ढांपे किसी घुड़सवार ने अस्तबल में आकर घोड़ी बांधी। बीबो की जान में जान आई। उसका घर वाला मुजरा सुनने गया हुआ था। मेहमान को भीतर खड़ा करके उसने साहिबां की व्यथा सुनाई और पूछा कि वह क्या चाहता है।

"बस मौसी, साहिबां से कहना, वह तैयार रहे। मुर्गे की पहली बांग पर मैं और मेरी घोड़ी उसके दरवाजे के सामने होंगे। लोग उस वक्त बेखबर सो रहे होंगे।"

एक-एक पल साहिबां के लिए सदी से भी अधिक लंबा होता जा रहा था।

"अगर मिरजा न आया तो कल डोले में चढ़ कर मैं मौत के कंधों पर जा रही होऊंगी...अगर मिरजा न आया और उसने मुझसे पल्ला छुड़ा लिया तो मैं किसके लिए जीऊंगी ? ...अगर मिरजे ने मुझे अपना लिया तो मैं कैद भी काट लूंगी..."

बाजों की आवाजें गूंज उठीं। साहिबां ने दोनों हाथों से अपना कलेजा थाम लिया, "हाय-हाय— मिरजा नहीं आया !" और वह एकदम मरने की तरकीबें सोचने लगी।

बीबो ने आकर उसे बांहों में लपेट लिया। साजन की खबर सुन कर मरने की बजाय जीने की तमन्नाएं फिर धड़क उठीं।

चांदनी रात आधी बीत चुकी थी। मुजरा सुन कर लोग घरों में जा सोए। दिन भर के ढोल-बाजों के शोर के बाद गांव में बहुत खामोशी छा गई थी। इस खामोशी में साहिबां चारपाई पर लेटी, किसी आवाज का इंतजार कर रही थी। थकावट का बहाना बना कर उसने लेटते वक्त कपड़े भी नहीं बदले थे।

घोड़ी के कदमों की टप-टप...

साहिबां उठी, उसने चारों तरफ देखा, सब सो रहे थे। सोए हुए चेहरे उसे अच्छे लगे। उसने एक आह भरी, "काश इस घर से नाता तोड़ कर मुझे जाना न पड़ता !" और दबे पांव निकल कर, दरवाजा खोल कर, वह दीवार के साथ सट कर खड़ी हो गई।

पल भर बाद घोड़ी उसके पास आकर रुक गई। मुंह लपेटे हुए सवार ने रकाब में से एक पैर निकाला, साहिबां ने अपना पैर रकाब में डाल दिया। सवार के बढ़े हुए हाथ को पकड़ कर उसने दूसरे हाथ से काठी पकड़ ली और उचक कर साहिबां सवार के पीछे जा बैठी। उसकी मेहरबानी के लिए मौन कृतज्ञता प्रकट करने के वास्ते उसने एक बार उस सवार की कमर के गिर्द बांहें डाल दीं और उन्हें कस कर आलिंगन में बांध लिया। सवार ने मुंह नीचा करके उन बांहों को चूम लिया।

गांव की सीमा पार करके घोड़ी हवा से बातें करने लगी। मिरजे का सपना सच हो गया।

कुछ दूर जाकर मिरज़े को साहिबां के साथ की गई प्रतिज्ञा की याद आई—'तेरे भाईयों पर आफत नहीं आएगी !' लेकिन अगर उन लोगों ने पीछा किया तो मुकाबला होकर रहेगा, यह सोच कर मिरजे ने दानाबाद का रास्ता छोड़ दिया और लंबे रास्ते की तरफ लगामें मोड़ दीं।

पौ फटते ही एक फूला-फला बाग सामने आ गया। पेड़ों के एक झुरमुट के नीचे घोड़ी को खड़ा करके मिरजा नीचे उतरा और उसने साहिबां को उतार कर अपने आलिंगन में ले लिया। मिलन के चैन में सारी चिंताएं खो गईं। साहिबां ने मिरजे के कंधे से कमान उतार ली, मिरजे ने उसमें एक तीर अटका दिया।

"ये तीर, यह कमान, यह घोड़ी, ये मेरी बांहें और तुम !" मिरजे ने साहिबां का सर चूमते हुए कहा, "लगता है, दोनों जहान मेरे अपने हैं।"

"मिरजिया, यहां क्यों ठहरता है ? ...चल, घर चलें।"

"नहीं साहिबां, क्या पता वहां कौन से टंटे उठ खड़े हों ? उसमें फंसने से पहले मैं तुझे समूचे तौर से अपने दिल में डालने की तमन्ना तो पूरी कर लूं। घड़ी भर के लिए तू सारी दुनिया को भूल जा, मेरे दर्द-भरे दिल की साहिबां, मेरे वियोग की टीस दूर कर दे।"

एकदम साहिबां के पैर इस धरती से ऊपर उठ गए, प्यार के निर्दोष आसमान में उसने भाग कर मिरजे के गले में बांहें डाल दीं।

दिल का मरहम दिल से आ लगा, बरसों का रीतापन भर गया। मिरजे की आत्मा से जैसे कोई शिकंजा हट गया, उसने कहा, "साहिबां, इस घड़ी के बहिश्त की कीमत मैं अपनी जिंदगी देकर चुकाने के लिए तैयार हूं। मुझे अपना सर अपनी जांघों पर रख लेने दो, तुम ऊपर से मेरी आंखों में देखो।"

और मिरजा लेट गया। उसने बांहें पीछे करके साहिबां को आलिंगन में ले लिया। कभी साहिबां का सर अपने आप झुक जाता था, कभी मिरजा उसका सर पकड़ कर अपनी तरफ झुका लेता था।

थके अंगों में प्यार की झरती फुहार से सुस्ती पैदा हो गई। आंखें मुंद गईं। तरकश और कमान मिरजे को चुभते देख कर साहिबां ने उन्हें उसके गले से उतार कर एक तरफ कर दिया, वह मिरजे के नींद से स्वप्निल नैन-नक्शों को देख कर विभोर होती गई।

अब उसे फिर याद आया कि लोग उनका पीछा कर रहे होंगे। जरा सी आहट सुनते ही वह चौंक उठती, मिरजे को जगाना चाहती, लेकिन वह आहट यूं ही होती।

"लेकिन अगर किसी से खबर मिलने पर वे लोग इधर ही आ गए तो ?"

साहिबां ने तरकश में रखे तीर गिने। बारह से भी ज्यादा थे। उसने कमान पर हाथ फेरा। ...बड़ी बेरहम कमान थी...भाइयों का खयाल आ गया, मिरजे के अचूक निशाने की याद आ गई, उसका दिल कांप उठा। 'लेकिन मिरजे ने मुझे वचन दिया है,' सोच कर उसने चैन की सांस ली। 'लेकिन अगर वे ऊपर ही आ गए तो मिरजा फिर कैसे अपना वचन निभाएगा ? वे लोग गिनती में ज्यादा होंगे...तीरों से तो वह लश्कर को भगा सकता है ! साहिबां ने आहिस्ता से मिरजे को जगाया, "उठ, यहां से चल दें।"

लेकिन मिरजा किसी मीठे सपने की लोर में था। उसने पूछा, "क्या कोई आ गया है ?"

"नहीं।" सुन कर वह फिर सो गया।

'भाई जरूर आ पहुंचेंगे,' साहिबां का डर बढ़ता गया, 'सारे मर जाएंगे !' ...मिरजे का प्यारा सर आहिस्ता से अपनी जांघों से उतार कर उसने तरकश उठा लिया और दूर जंड के पेड़ की पिछली तरफ ऊंची सी टहनी पर टांग आई। उसने फिर मिरजे का सर अपनी जांघ पर रख लिया।

'अगर उन्होंने निहत्थे मिरजे को मार डाला ?' सोच कर उसका दिल दहल गया। 'मैं बीच में आ जाऊंगी, मुझे चीर कर पार किए बगैर तलवार मिरजे को नहीं

छू सकेगी ! अगर मैं उनकी मौत बरदाश्त नहीं कर सकती तो वे मेरी मौत कैसे बरदाश्त कर लेंगे !' इस विचार से उसका मन निश्चिंत सा हो गया। उसने मिरजे के माथे पर हवा से अस्त-व्यस्त हुए घुंघराले वालों को परे हटा कर उसका माथा चूम लिया।

साहिबां को घोड़ों की टाप सुनाई दी। "वे आ गए।" उसने अपने छोटे भाई छिंदे को पहचान लिया जो आगे-आगे था। उसके हाथ-पैर फूल गए। उसने मिरजे को झकझोर कर जगाया, "उठो, घोड़ी पर चढ़ कर यहां से भाग चलें !"

"तरकश ! मेरा तरकश...साहिबां अभी तो तरकश मेरे गले में था। मैं मारूंगा नहीं...मेरे सधे हुए तीर की ललकार भी आफत डाल देगी। कहां है मेरा तरकश ?"

"मिरजिया, मुझे माफ कर देना, भाईयों के मोह में आकर तुमसे निर्मोही हो गई थी— तरकश तेरे हाथों से दूर हटा दिया है। अब वह तेरे किसी काम का नहीं। वे लोग आ पहुंचे हैं— छलांग मार कर घोड़ी पर चढ़ जा।"

"नहीं साहिबां, तुझे छोड़ कर मैं भाग नहीं सकता।" वह भाग कर काठी में से तलवार ले आया। "साहिबां, अब गिनती जाना, अगर तेरे किसी भाई को चोट लग जाए तो माफ कर देना। लेकिन...लेकिन मैं लड़ते-लड़ते ही मर सकता हूं।"

साहिबां उसके गले से लिपट गई। मिरजे ने उसे दूर हटा दिया, "वे लोग तुम्हें किसलिए मारेंगे ? तुझे मुझसे दूर हटा कर खंजर मेरे सीने से पार करने के लिए एक नहीं, दो आदमियों की जरूरत पड़ेगी। हट जा, साहिबां ! वे लोग पास आ गए हैं, मुझे अपनी तकदीर से मिल लेने दे !"

मिरजे ने तलवार सूत ली। सात जने 'धम्म' से कूद कर घोड़ियों से नीचे आ गये, तलवारें चमकने लगीं, साहिबां कूद कर बीच में जा खड़ी हुई।

"अरे बीरनो— अब न मैं भाग सकती हूं, न मिरजा भाग सकता है। जल्दी मत मचाओ, मेरे भाइयो !"

"हम किसी की कोई बात नहीं सुनेंगे। हम लोगों ने अपना चोर घेर लिया है।" यह आवाज उसके भाई की नहीं थी। साहिबां उसे नहीं पहचानती थी, अगर रात को वह भाग न आती, तो आज ताहिर नाम का यह आदमी उसका खाविंद बना होता...

"मेरे हमशीरो ! मैं तुमसे कहती हूं, तुम लोगों को, जिनकी वफा की खातिर मैंने मिरजे से बेवफाई की है..."

"तू हमारे साथ अच्छी वफा करके आई है !" छोटा भाई बोला।

"एक ही बार मैंने जिंदगी में अपने दिल के साथ भी वफा की, हमेशा तो मैं दूसरों की ही वफादार रही— लेकिन छोड़ो यह बात। अगर मैंने इसके तीर न छिपाए होते तो तुममें से कई इस वक्त अपने पैरों पर खड़े न होते। मेरी यह बात सुन लो कि मैंने अपनी वफा के कारण ही ऐसा किया था।"

"क्या चाहती है ? बता।" बड़ा भाई बोला।

"इसे हम जीता छोड़ने से तो रहे— यह हमारा चोर है !" ताहिर फिर न रह सका,

साथ ही उसने मिरजे के पेट का निशाना साध कर अपनी तलवार फेंकी।

निशाना चूक गया, लेकिन मिरजे का खून खौल उठा, वह शेर की तरह लपका, "साहिबां, इस आदमी के बारे में मैंने तुझे कोई वचन नहीं दिया।" एक ही वार में मिरजे ने ताहिर को ढेर कर दिया।

यह देख कर सब उस पर टूट पड़े। तलवार पर तलवार खनखनाई। मिरजा तलवार का भी धनी था। सबके वार रोकता गया।

साहिबां विलाप करती हुई, भाइयों के पैर पकड़ रही थी, मिन्नतें कर रही थी, "ना रे, वीरो ना— मैं तुम्हारी गुनाहगार हूं— इसके साथ भी दगा मैंने ही किया, इसे बुलवाया भी मैंने ही था— वीरो, तुम्हारी खातिर— ना वीरो ना— सिर्फ अपनी बहन की खातिर..."

तलवारों की खनखनाहट में किसी ने उसकी मिन्नत-चिरौरी न सुनी। छह तलवारों के वार रोकते-रोकते आखिरकार मिरजे की बांह भारी हो गई थी। अब उससे सारे वार नहीं रोके जा रहे थे— कभी बांह में से लहू की धारा फूट निकलती, कभी कंधे चिर जाते, उसका सीना भी छलनी हो गया। साहिबां से देखा न गया, वह बीच में आकर धंस-धंस जाती थी।

"इसे जरा कस कर पकड़ो !" एक भाई ने साहिबां को जकड़ कर बेबस कर दिया।

मिरजे को लगी हर चोट पर साहिबां के भीतर से चीख निकलती। आखिर मिरजे के सीने पर एक गहरा वार हुआ, वह गिर पड़ा और तलवार उसके हाथों से छूट गई।

साहिबां में एकदम शेरनी की सी ताकत आ गई। भाई की जकड़ में से निकल कर वह मिरजे के सामने जा खड़ी हुई और उसने मिरजे की तलवार हाथ में कस कर पकड़ ली, "अब मेरे नजदीक मत आना— मैं साहिबां नहीं, मैं पागल हूं ! तुम लोगों ने मिरजे को मार डाला है। अब वह दो घड़ियों का मेहमान है— उसके साथ मैंने जो धोखा किया है, उसकी माफी मुझे मांग लेने दो।"

इस गम और इस निडरता के सामने कौन न स्तब्ध हो जाता ! वे लोग दूर हट गए।

साहिबां ने मिरजे के लहू से सने बाल माथे से हटाए, दुपट्टे से उसकी आंखों का लहू पोंछा, उसका माथा चूमा। "मिरजिया !"

"हां, साहिबां !"

"मुझे माफ कर देना ?"

"माफी काहे की ! मैंने अपनी जिंदगी की पूरी कीमत वसूल कर ली है— एक फरिश्ते को छू लिया है..."

"मैंने तुझे कुछ नहीं दिया— सिर्फ मौत ही दी।"

"नहीं, तूने मुझे अमर बना दिया है।"

"मिरजिया, क्या पल भर के लिए तू अपनी आंखें खुली रख सकता है ?"

"ये तो मुंदी जा रही हैं, लेकिन अगर तू चाहती है तो ये खुली रहेंगी— अगर तू मेरा हाथ अपने हाथ में थामे रहे।"

साहिबां ने उसका हाथ उठा कर चूम लिया।

''मैं तुझ पर कुरबान जाऊं, मिरजिया ! मैं चाहती हूं, तू देख ले, मैंने तेरे साथ नहीं, अपनी तकदीर के साथ बेवफाई की है। यह मत समझना कि मुझे अपने भाई तुमसे ज्यादा प्यारे थे— सिर्फ अपनी खुशी की बजाय दूसरों की खुशी से प्यार करने की मेरी आदत तेरी कातिल बन गई। मैं तेरी हूं— तुमसे मुझे कोई अलग नहीं कर सकता।...''

और साहिबां उठ कर मिरजे की खुली आंखों के सामने जा खड़ी हुई। उसके हाथों में मिरजे की तलवार थी। मूठ को चूम कर उसने तलवार अपने पेट में घोंप ली। और गिरती-गिरती मिरजे की पीठ के साथ लेट गई।

सस्सी पुन्नू

अमृता प्रीतम

शाही बगीचे के पेड़ों में जब फूल खिलते, तो महल की खिड़की में खड़ी हुई रानी टूटी हुई लता की तरह उदास हो जाती—"खुदाया ! धरती का चप्पा-चप्पा हरा हो गया, मेरी कोख क्यों हरी नहीं होती ?"

और फूलों का मौसम जो हर बरस पेड़ों और पौधों पर आता था, एक बार रानी के बदन में भी आ गया। रानी बौर से भरी हुई टहनी की तरह सजदे में झुक-झुक जाती थी।

उम्मीद का उड़ता पंछी उसकी खिड़की में आ बैठा था। वह अपनी हथेलियों पर मेहंदी लगाती और सोचती—'इसे हाथ पर दाना चुगाऊंगी...'

आईने के सामने खड़ी वह दंदासा मलती तो गहरे लाल रंग जैसी एक लोरी उसके होंठों पर आ जाती...

सच्चे रेशमी पालने में वह मोतियों की लड़ियां बांधती और इंतजार के दिनों को मोतियों के दानों की तरह गिनती।

एक दिन मोती पिरोते-पिरोते, उसके हाथ से धागा टूट गया। सारे मोती फर्श पर फैल गए, दासियां संगमरमरी फर्श से मोती बीनती रहीं, लेकिन रानी टूटे हुए धागे की तरह चिंता में डूब गई—'कहीं मेरे कर्मों के मोती मेरे हाथों से न गिर पड़ें !...'

भंबोर शहर के राजा ने खजाने का मुंह खोल दिया। लोग खाली झोलियां लेकर आते और उन्हें भर कर ले जाते। राजा और रानी रात के वक्त खुदा के सामने झोली फैला कर कहते, "हम जग के राजा, लेकिन तेरे दर के भिखारी हैं। तू हमारी झोली भर दे, ऐ मालिक !"

और दूज के चांद सी बेटी उनकी झोली में पड़ गई।

"यह तो मेरी कल्पना से भी सुंदर है !" रानी बार-बार उसके मुंह की तरफ देखती और अंग-अंग से लोरियां गाती।

नसों का लहू जब दूध बनकर रानी की छाती में से बहने लगा तो एक दिन दूध पीते-पीते सस्सी के होंठों से दूध की बूंदें फर्श पर जा गिरीं। दूध की बूंदें सफेद मोतियों जैसी थीं। अचानक रानी को उस दिन की याद आ गई, जब मोतियों की लड़ी उसके हाथ से टूट गई थी और सारे मोती फर्श पर फैल गए थे। रानी ने धड़कते कलेजे से अपनी बेटी को जोर

से अपने सीने से चिपका लिया, लेकिन सारी रात उसके होंठों की लोरी कांपती रही थी...

सुबह जब राजा दरबार में गया तो रानी को यह देख कर हैरानी हुई कि वह फौरन महल में वापिस आ गया था। राजा सस्सी के पालने के पास आकर इस तरह बैठ गया था, जैसे कोई कब्र के पास बैठा हो...

रोती और कांपती हुई रानी कभी अपनी बेटी की ओर देखती, कभी बेटी के बाप की तरफ। आखिर राजा ने बताया, "यह हमारी बेटी, हमारे कुल का दाग, मैं इसका क्या करूं? आज ज्योतिषियों (नजूमियों) ने बताया है कि जब यह जवान होगी तो सारी दुनिया से न्यारी होगी। किसी मर्द के इश्क में यह घर-बार भी छोड़ देगी और कुल की लाज भी..."

"दाग तो चांद में भी होता है...," रानी टूटी हुई लता की तरह राजा के पैरों के पास गिर पड़ी।

"चांद-तारों की खता माफ होती है, रानी ! लेकिन आदमजात को नहीं...

"यह भी तो चांद का टुकड़ा है, ..." कहती-कहती रानी बेहोश हो गई।

अपनी कोख से जनमी को अपने ही हाथों से भला कैसे मारा जा सकता था ? सो वजीरों और अहलकारों की सलाह से राजा ने चंदन की लकड़ी का एक संदूक बनवाया, उसमें हीरे और मोती जड़वाए, रेशम के बिछौने बिछाए और मोहरों की थैलियों के पास लहू-मांस की पोटली जैसी अपनी बेटी को लिटा कर संदूक को नदी में बहा दिया— "ले ख्वाजा खिज्र ! यह तेरे हवाले है !"

रानी को होश आया तो उसके होंठों की लोरियां विलाप बन गईं— "हाय री बिटिया ! तुझे कैसी डोली में डाला, कहीं मगरमच्छों के कहार तेरी डोली उठा कर तो नहीं ले जा रहे !..."

शहर के बाहर एक घाट पर अत्ता धोबी कपड़े धो रहा था। नदी के पानी में उसे कोई चमकदार चीज दिखाई दी। उसने कई बार आंखें झपकाईं और देखा, चढ़ी हुई नदी में रंगीन सपने जैसी कोई चीज बहती हुई जा रही थी...

मोतियों और पन्नों से जड़े संदूक पर जब सूरज की किरणें पड़ती तो वह झिलमिलाने लगती थीं। अत्ते धोबी ने अल्लाह का नाम लेकर पानी में छलांग लगा दी और संदूक की दिशा में तैरने लगा। उसने जाकर संदूक को हाथ से पकड़ लिया। किनारे पर लाकर जब उसने संदूक खोला तो कितनी देर तक देखता ही रह गया। उसे विश्वास नहीं हो रहा था कि उस जैसे निस्संतान के यहां तकदीर कैसे खुद चल कर आई है ! ख्वाजा खिज्र ने चांद की फांक जैसी बेटी आज अचानक उसकी झोली में डाल दी थी।

"इस तकदीर को आज किसने अपने हाथों से बहाया होगा ?" अत्ते की समझ में कुछ नहीं आ रहा था, लेकिन वह अंगूठा चूसती हुई सस्सी को बार-बार गले से लगा रहा था और गदगद हो रहा था।

''कितनी मासूम सूरत है !'' अत्ते की बीवी ने जब सस्सी को अपनी झोली में डाला तो उसकी सूखी रगों में ममता बहने लगी।

बच्ची के गले में सोने की जंजीर से बंधा एक तावीज था। अत्ते ने उसमें सस्सी का नाम पढ़ा और तावीज को, संदूक के हीरे-मोतियों को एक पोटली में बांध कर पिछवाड़े की कोठरी में अमानत की तरह संभाल कर रख दिया, ''बिटिया ! तेरी जवानी की अमानत। जब बड़ी होगी तो तू ही इन्हें पहनना !''

अत्ते ने देगें चढ़ाईं और सारी बिरादरी में बांटी। शीरनी का पहला थाल नदी को चढ़ाया, ख्वाजा खिज्र को बार-बार यही कहता रहा— ''आज मैं सचमुच जग में रहने के काबिल हो गया, भाइयो ! मेरे सोए नसीब जाग उठे हैं।''

अत्ते की बीवी ने जब बच्ची को भींच कर अपनी छाती से चिपकाया तो उसकी सूखी छातियों में दूध उतर आया। उसे ऐसा लगा जैसे उसकी निष्फल जा रही देह में एक इलाही फूल खिल उठा हो।

इस तरह महलों की रौनक धोबी के आंगन में खेलने लगी।

सस्सी को रूप चढ़ा तो बाढ़ की तरह। जवानी चढ़ी तो बाढ़ की तरह। रिश्ते-नातेदारों की ओर से शादी के पैगाम आने लगे। लेकिन अत्ता जब बेटी के चेहरे की तरफ देखता तो उसकी आंखें मुंद जातीं। सोचता, 'इस बिटिया के लिए तो कहीं से कोई फरिश्ता ढूंढ़ कर लाऊं। इसके योग्य कौन आदमी है ? मुझे तो कोई दिखाई नहीं देता...'

जो रिश्तेदार अत्ते की मिन्नतें करते वे अब कहने लगे, ''अत्ते की बेटी तो आसमान से उतरी है, इसके दरवाजे पर तो किसी राजा की बारात आएगी।''

सस्सी के हुस्न की धूम मच गई। बात झोंपड़ियों से चल कर अमीरों और वजीरों के कानों में जा पड़ी। किसी ने राजा से भी कह दिया, ''अत्ते धोबी की लड़की तो महलों में रहने के काबिल है।''

राजा का बुलावा आया तो अत्ते की छाती में हौल पड़ गया— 'हे ख्वाजा खिज्र ! ये नदियां उल्टी क्यों बहने लगी हैं ?' लेकिन राजा का हुक्म था, टाला नहीं जा सकता था।

अत्ते की बीवी ने सस्सी को उबटन मल कर नहलाया और कपड़े पहनाते हुए उसकी रक्षा के लिए संभाल कर रखा हुआ उसका सोने का तावीज भी उसके गले में पहना दिया।

बेटी को लेकर जब अत्ता महल में पहुंचा तो सस्सी को देख कर राजा से आंखें न झपकाई गईं। सोचने लगा, 'ऐसा रूप तो किसी को महलों में भी नसीब नहीं होता, यह धोबी कौन से आसमान से मुट्ठी भर कर लाया है...?'

पैरों के नीचे की धरती जैसे मखमल की हो गई। राजा ने बौरा कर सस्सी का हाथ पकड़ा। लेकिन ज्यों ही उसने सस्सी के कंधों की तरफ बांह बढ़ाई तो उसकी नजर उसके गले में पड़े तावीज की तरफ गयी। राजा के पैरों तले धरती हिलने लगी...

राजा ने भीतरी महल से रानी को बुला लिया और सस्सी के गले में पड़ा तावीज उसे दिखाया।

"बिटिया...बिटिया... !" रानी के बोल कांपने लगे।

राजा के कलेजे को कोई कचोट रहा था, लेकिन सूरत देख कर भी यह स्वीकार करना हिचकिचाहट से भरा लगा कि नदी में बहाया हुआ उसका कलेजे का टुकड़ा अब भी इस संसार में जिंदा है !

रानी को लगा, जैसे यह इस संसार की घटना नहीं थी, वह इस डर से आंखें नहीं झपकाती थी कि यह सपना कहीं आंखों के सामने से अदृश्य न हो जाए !

राजा ने अत्ते धोबी को अपने पास बिठाया, और हुक्म दिया कि वह सारी हकीकत बयान करे।

"खान ! सुलतान ! ख्वाजा खिज्र ने मेरी खाली झोली भर दी थी। मोतियों से जड़े संदूक में यह रेशमी पटोले की तरह पड़ी हुई थी और संदूक नदी में बहा जा रहा था..." अत्ते धोबी ने हाथ बांध कर सारी हकीकत बताई और राजा के पैर पकड़ लिए—"यह जलपरी की तरह जल में से निकली थी, बादशाह सलामत ! ऊपर अल्लाह नीचे बादशाह, नहीं तो मेरी क्या औकात कि यह परीजादी मेरे आंगन में खेलती...!"

राजा ने अत्ते धोबी के सामने एक सौ एक मोहरें चढ़ावे की तरह चढ़ाईं, और फरमान दिया, एक प्रार्थना की तरह कि, "भगवान की महिमा है, अत्ते ! अब जिस गांव पर तू हाथ रखे वही तेरा होगा ! लेकिन हमारे महलों की रोशनी हमें मोड़ दे... !"

और रानी के सीने में से आशा की कोंपलें फूट निकलीं। उसने कहा, "मैं तेरे एहसान का बदला नहीं चुका सकती, अत्तेया ! लेकिन मां के इस नसीब को लौटा दे।"

अत्ते के होंठ कांपने लगे। उससे बोला नहीं जा रहा था। उसकी जगह सस्सी ने कहा—"रानी मां ! जब-जब हुक्म दोगी मैं हाजिर हो जाऊंगी, लेकिन रहूंगी उसी छत तले जिसने मुझ मरती हुई को शरण दी थी।"

और महलों की रौनक धोबी के आंगन में खेलती रही। पहले सिर्फ परमात्मा की नजर जानती थी, फिर दुनिया की आंखों ने भी देखा— सस्सी पानी की तरह आजाद, जब जी चाहता, नदी के घाटों पर घूमती।

राजा ने सस्सी के लिए एक अलग बाग बनवाया। वहां जाकर सस्सी सहेलियों के साथ झूला झूलती और गाती। फूलों की तरह सस्सी की आत्मा भी महकने लगी।

अब दुनिया की नियामतें सस्सी पर थीं। विद्वानों और शिक्षकों को बुलाया गया और उसने पढ़ाई की तरफ अपना मन लगाया। सारी-सारी रात उसके पास चिराग जलते और उसकी रोशनी में वह अपनी आत्मा में ज्ञान का प्रकाश भरती।

पता चला कि शहर में एक गजनी सौदागर ने एक बाग बनवाया है और बाग के भीतर की इमारत में उसने इस तरह की तस्वीरें बनवाई हैं जिसे आज तक न किसी ने देखा, न ही किसी ने उसके बारे में सुना है।

सस्सी को भी ज्ञान का शौक लगा था। सहेलियों को लेकर दौड़ी हुई गजनी के सौदागर के बाग में पहुंची। देख कर सस्सी का मन झूम उठा— दानों तरफ से इमारत की

दीवार महकी हुई थी। एक तरफ शगूफ़ों की महक से और दूसरी तरफ रंगों की महक से। बाहर एक माली कई पनीरिये लगा रहा था, और भीतर एक चित्रकार कई रंगों से तस्वीरें बना रहा था।

सस्सी ने तस्वीरें देखीं और हुस्न को सलाम किया। लेकिन इन तस्वीरों में एक तस्वीर ऐसी थी जिसे देखते ही सस्सी के पैर ठिठक गए। आंखें झपकना भूल गईं। जब सहेलियों ने सस्सी को झकझोरा तो उसने विह्वल होकर चित्रकार के सामने हाथ जोड़ कर कहा—"यह तस्वीर तूने किसकी सूरत देख कर बनाई है, ऐ हुनर वाले ?"

चित्रकार हंस पड़ा—"सूरत खुदा ने बनाई, तस्वीर इस नाचीज ने। यह कीचम के वली अलीहोत का शहजादा पुन्नू..."

"पुन्नू...पुन्नू...!" सस्सी के रोम रोम में से एक आवाज निकली—"पुन्नू...पुन्नू...!"

ज्ञान को देखने और परखने आई सस्सी ने अपनी तकदीर मोल ले ली।

सारे दिल की कीमत देकर सस्सी ने पुन्नू की तस्वीर को आंखों में बसा लिया।

भंबोर शहर का कोई हाकिम ऐसा नहीं था जो सस्सी का ताबेदार नहीं था। हर घाट पर चौकियां बैठा दी गईं— जो कोई सौदागर शहर से आए सबसे पहले उसे सस्सी के सामने पेश किया जाए।

"सौदागरों की जान और माल सलामत रहेंगे, लेकिन वे तब तक अपने देश नहीं लौट सकते जब तक वे अलीहोत के शहजादे पुन्नू को यहां नहीं ले आते।" सस्सी ने उस जमीन की तरफ से आती हवा को सजदा किया और यह फरमान दिया, जिससे सौदागरों में हाय-तोबा मच गई। एक सौदागर को उन्होंने दूत बना कर कीचम के लिए रवाना कर दिया। कीचम के वली अलीहोत ने सुना तो बलोचों में रोष फैल गया।

इस रोष की खबर पुन्नू के कानों में भी पड़ी। उसने दूत को एकांत में बुलाया और उससे सस्सी के इश्क की खबर सुनी।

सस्सी के दिल की आग पुन्नू के दिल को भी छू गई। उसका रोम-रोम सस्सी के इश्क में सुलग उठा।

सुबह को सूरज की लाली को देख कर पुन्नू को ऐसा लग रहा था, जैसे आज सूरज नहीं, सस्सी का इश्क आसमान पर चढ़ा हुआ था।

पुन्नू ने चढ़ते सूरज को सजदा किया और इत्र-फुलेलों की गठरी लेकर सौदागरी भेस में अपने बाप को बिना बताए चोरी-छिपे भंबोर शहर की तरफ चल पड़ा।

"कीचम से सौदागर आए हैं।" यह खबर जब पहरेदारों ने सस्सी के कानों तक पहुंचाई तो सस्सी व्याकुल होकर भागी हुई उन शामियानों में गई, जहां कीचम के सारे सौदागर तरह-तरह के सामान की हाट लगा कर बैठते थे।

पुन्नू भी सौदागरों की कतार में एक सौदागर की तरह बैठा था। सस्सी से पहचाना न गया। लेकिन जब पुन्नू ने सस्सी का सौंदर्य देखा तो उसे लगा— जिस सूरज का उसने

आसमान में सजदा किया था, वही सूरज उसके सामने धरती पर आ उतरा था।

पुन्नू ने इत्र का फाहा सस्सी के पास जाकर उसके पल्ले से इस तरह छुआया जैसे रब्ब की दरगाह में चढ़ाया हो।

'सिफ्त खुदावंद की !' सस्सी की आंखों में एक लौ कौंध गई। लेकिन उसने कांपते हुए होंठों से पूछा, "ऐ सौदागर ! तू बड़े खुशकिस्मत देश से आया है, सच बता ! तूने कभी मेरा पुन्नू भी देखा है ?"

"हां !" पुन्नू ने अदब से सिर झुका लिया। फिर सिर उठाया तो सस्सी की आंखों में देख कर कहने लगा, "परीजादी ! असली पुन्नू को मैंने आज ही देखा है, तेरी आंखों में।"

दोनों के सिर एक-दूसरे के सामने सजदे की तरह झुक गए।

उधर पुन्नू के भाई गुस्से में आकर डाचियों (ऊंटनियों) पर सवार होकर पुन्नू के पीछे-पीछे भंबोर शहर में पहुंचे। देखा कि सारा शहर शमादान की तरह रौशन था। खबरें सुनते हुए वे सस्सी के उस बाग में पहुंचे जहां पुन्नू ठहरा हुआ था। फूलों के जश्न में सस्सी की सहेलियां कबूतरियों, चिड़ियों और बुलबुलों की तरह चहक रही थीं।

पून्नू के भाइयों ने आपस में सलाह की, डाचियों को बाहर पेड़ों से बांध कर भीतर चले गए और उन्होंने सस्सी और पुन्नू को प्यार दिया। जबान में मिसरी घोल कर कहा— "हम अपने भाई की खुशी में शरीक होने के लिए आए हैं।"

"खुशामदीद ! आपकी राहों में मैं अपनी पलकें बिछाती हूं।" सस्सी ने कहा और उसने जर्दे और पुलाव की देगें चढ़वा दीं।

शाम हुई तो पुन्नू के भाइयों ने जाम और सुराहियां निकालीं, "निकाह से पहले हम तीन दिन तक जश्न मनाएंगे।"

सस्सी की सहेलियों ने मेहंदी घोली, इत्र-फुलेल डाल कर उबटन बनाया, सस्सी और पुन्नू को सच्चे रेशम के जोड़े पहना कर, ढोलकी बजाने लगीं।

महलों में से रानी मां ने मोतियों के थाल भेजे और अत्ते ने गरी-छुहारों से भरी टोकरी लाकर बलोचों की नजर की।

अत्ते के सभी रिश्तेदारों ने घाट के किनारे पर चिराग जलाए और ख्वाजा खिज्र को भी शीरनी का थाल चढ़ाया।

यह पुण्य कमाने का समय था, लेकिन पुन्नू के भाइयों ने पाप कमाया। पुन्नू के आखिरी जाम में नींद की दवाई घोल दी। एक आखिरी जाम पीने की एक स्वाभाविक रस्म थी, जिस वजह से पुन्नू के मन में कोई संदेह न उठा। लेकिन जाम खाली होते ही पुन्नू को नींद आने लगी।

सस्सी अपने शामियाने में सहेलियों के साथ जाकर सो गई और पुन्नू अपने शामियाने में अपने भाइयों के साथ जाकर सो गया।

सुबह होते ही जब सस्सी जागी, तो रात का अंधेरा सूरज के सामने दुहाई दे रहा था। पुन्नू का शामियाना फटी हुई झोली की तरह सस्सी के सामने पड़ा था। आधी रात के समय पुन्नू के भाई नींद में बेसुध पुन्नू को डाची पर डाल कर कीचम की ओर लौट गये थे।

फूलों की सारी महक सस्सी के होंठों का गम बन गई। उसने दीवानगी में उन रेगिस्तानों की तरफ बांहें फैलाईं जिनमें से इस वक्त पुन्नू की डाची उसे छीन कर लिए जा रही थी।

सस्सी की सहेलियां विलाप करती हुई सस्सी के पीछे भागीं, लेकिन दीवाने कदमों से पीछे भागती हुई हांफने लगीं। सस्सी नंगे पैर डाचियों के पैरों के निशान ढूंढ़ती हुई पता नहीं कहां की कहां पहुंच गई थी !

"पुन्नू ! पुन्नू !" सस्सी की आवाजें रेगिस्तान में रेत के टीलों की तरह उठतीं और गिर जातीं।

सस्सी के पैर के तलवों में लगा मेहंदी का रंग लहू की तरह लाल हो गया। सिर के ऊपर सूरज उसके इश्क की तरह जल रहा था— वह सिर से पैर तक जैसे आग की लपट की तरह जलती हुई मरुस्थलों में भाग रही थी।

रानी मां का भेजा हुआ मोतियों का हार सस्सी के गले में पड़ा था। उसके खुले बालों में अटक कर पता नहीं किस समय उस हार का धागा टूट गया। छम-छम करते मोती रेत में गिरने लगे। इस वक्त सस्सी को अपनी तकदीर का वह वक्त याद आया, जब उसके जन्म के वक्त मां उसके पालने के लिए मोतियों की लड़ियां पिरो रही थी और लड़ी टूट गई थी...

सस्सी को जब रानी मां की बताई हुई बात याद आई, तो उसके मुंह से आह की तरह ये शब्द निकले— "मेरी तकदीर तो मां ने तभी पहचान ली थी... !"

पैरों के छालों की तड़प में उसने रेत में गिरे मोतियों को देखा और फिर डाचियों के पैरों के निशान ढूंढ़ने लग गई।

मरुस्थलों की रेत सस्सी की चिंताओं की तरह अनंत थी।

"मैं जल और थल की अमानत !" सस्सी ने तड़प कर अपने दिल से कहा— "अथाह जल ने मुझे एक अमानत की तरह अपनी हथेली पर उठाए रखा, अब ये मरुस्थल भी मेरे इश्क की अमानत की तरह मुझे संभाले रखेंगे..."

सस्सी ने गुरुओं-ज्ञानियों से सुन रखा था कि कुकनूस पंछी जब गाता है तो उसके पंखों में से आग की लपटें निकलती हैं। वह जैसे-जैसे गाता है, लपटें ऊंची होती जाती हैं और अंत में वह अपने पंखों की आग में भस्म हो जाता है।

सस्सी को लगा, जैसे उसके अंग-अंग में से आग की लपटें निकल रही हों। उसने और ज्यादा ऊंची आवाज में पुकारा— "पुन्नू... ! पुन्नू... !"

और उसके अंग अपनी आग में भस्म होने लगे...

नजदीक किसी टीले की ओट में एक गड़रिया बालक भेड़ें लेकर जा रहा था। उसके

कानों में हूकभरी सारी आवाजें सुनाई दी थीं। वह गर्म लू को चीरता हुआ टीले के पीछे से निकल कर वहां आ पहुंचा जहां किनारियों-जड़ा दुपट्टा किसी कफन की तरह मरुस्थल में पड़ा हुआ था।

"या इलाही !" गड़रिये ने दुपट्टे का किनारा उठा कर देखा, सस्सी बेहोश पड़ी थी।

गड़रिये ने एक भेड़ पर लदी मश्क में से पानी निकाला और सस्सी के चेहरे पर छींटे दिए।

सस्सी को होश आया, लेकिन क्षण भर के लिए । 'पुन्नू !...पुन्नू !'...पानी के कतरों की तरह उसने पुन्नू के नाम का एक घूंट सा भरा और सांस तोड़ दी।

गड़रिया बालक बहुत देर तक चुप का चुप उसके सामने बैठा रहा। फिर ढलते सूरज के साथ वह वहीं रेत में सस्सी की कब्र बनाने लगा।

गड़रिये की चढ़ती जवानी जैसे वैराग्य बन गई। उसे ऐसा लगा कि इस परीजादी की कब्र पर वह कब्र के दीये की तरह हमेशा जलता रहेगा...

शाम का अंधेरा अभी फैला ही था कि कोई डाची का सवार उसके नजदीक से गुजरा और उसे मरुस्थल में बैठा देख कर पल भर के लिए रुक गया। उसने पूछा. "यहां कहीं पानी मिलेगा ?"

गड़रिये ने जिस कसोरे में से सस्सी को पानी का घूंट पिलाया था, वही कसोरा उसके सामने रख दिया।

डाची के सवार ने कसोरे में से पानी का घूंट भरा और अचंभे से पूछा—"यहां मरुस्थलों में न कोई ओट है, न साया है। तू यहां किस लिए बैठा है, भाई ?"

गड़रिये ने हाथ से कब्र की तरफ इशारा किया और कहा—"मेरा मन दुनिया से भटक गया है, आज मैंने यहां एक परीजादी औरत को मरते देखा है..."

"कौन थी ?" डाची के सवार के हाथ में पकड़ा पानी का कसोरा कांप उठा।

"पता नहीं कौन थी, पुन्नू, पुन्नू कहते-कहते उसने सांस तोड़ दी थी..."

डाची के सवार ने अपना कांपता हुआ हाथ गड़रिये के कंधे पर रखा—"तो भाई ! एक मेहरबानी कर ! इस कब्र को खोल कर बड़ा कर दे !"

गड़रिया हैरान होकर डाची के सवार की तरफ देखता रहा, लेकिन डाची वाले को कुछ और कहने की फुर्सत नहीं थीं, वह खुद उस कब्र पर से रेत हटा रहा था।

कब्र खुली तो डाची के सवार ने पहले सस्सी के शरीर का सजदा किया, फिर अपने वस्त्र उतार कर उसके पैरों में रख दिए..."मेरे भाइयों ने दगा की थी, सस्सीये ! जब मुझे होश आया तो मैं अपनी वफा निभाने के लिए वापिस लौट आया..."

और पुन्नू जिस कटार के जोर से अपने भाइयों के साथ लड़ कर वापिस लौटा था, वहां कटार अपनी छाती में भोंक कर सस्सी की कब्र में गिर पड़ा।

गड़रिया हैरान...कब्र को ढंकता हुआ वह कब्र के दीये की लौ की तरह कांपने लगा...

सोहनी महीवाल

कर्तारसिंह दुग्गल

पंजाब पांच नदियों का देश है— जेहलम, चिनाब, रावी, ब्यास और सतलुज। सन् 1947 में देश के बंटवारे के समय तीन नदियां उधर रह गईं। दो नदियां, ब्यास और सतलुज हमारे हिस्से में आईं। तीन नदियों के अपने हिस्से को पाकिस्तान वाले भी पंजाब कहते हैं, दो नदियों के अपने टुकड़े को हम हिंदुस्तान वाले भी पंजाब कहते हैं। क्या पता इस उम्मीद में कि यह बनावटी रेखा कभी स्लेट पर लिखे अंकों की तरह मिट जाए और समूचा पंजाब झम-झम करता हुआ इस अंधेरे से उभर कर बाहर आ जाए।

पंजाब की नदियों में चिनाब की चर्चा सबसे अधिक होती रही है, खास तौर पर पंजाब के लोक-साहित्य में। लोक-गीतों और किस्से-कहानियों में चिनाब को झनां नाम से याद किया जाता है, और लोगों का विश्वास है कि इसके पानी में कोई अद्‌भुत तासीर है जो आदमी को कहीं का नहीं रहने देती— न दीन के काबिल, न दुनिया के काबिल ! इसी झनां नदी के किनारे कवि दमोदर की आंखों के सामने हीर और रांझे का दुखांत नाटक खेला गया। इसी झनां के किनारे मिरजा और साहिबां ने मुहब्बत की ऊंची पेंगे बढ़ाई थीं और वे मुंह के बल गिरे थे। इसी झनां के पानी पर सोहनी और महीवाल की कहानी लहू से लिखी गई।

यह बात उन दिनों की है, जब दुनिया भर के देश हिंदुस्तान को सोने की चिड़िया समझते थे। देश-देशांतरों से सौदागर तरह-तरह का सामान लाद कर लाते थे और इधर से किस्म-किस्म के हिंदुस्तानी माल लाद कर वापिस लौटते थे। कहानी बुखारे के एक सौदागर से शुरू होती है, जो अरबी घोड़ों आदि का व्यापार करता था। उस फेरी में उसके साथ इज्जतबेग नाम का एक अमीरजादा भी आया। इज्जतबेग घोड़ों का दीवाना था।

घोड़े की सवारी करता कभी कुमैद को हंसमोर चाल चलाता, कभी चीने के मुंह में लगाम देता, कभी मुश्की पर जीन डालता, और तरह-तरह के करतबों से ग्राहकों को चकाचौंध कर देता था। सौदागर के घोड़े, दुगने-चौगुने दामों पर बिक जाते थे। घोड़े बेचते-बेचते वे लोग गुजरात शहर में पहुंचे। वैसे तो उनके पास सिर्फ वही घोड़े रह गए थे, जिन पर सवार होकर उन्हें अपने देश लौटना था। लाहौर, दिल्ली, आगरा और कई दूसरे शहरों में वे घूम आए थे। मनों लौंग, इलायची, पिस्ते और किशमिश बेचबाच आए थे।

उन दिनों गुजरात प्रदेश मिट्टी के बर्तनों के लिए बड़ा मशहूर था। तुल्ला नाम का एक कारीगर खास तौर पर मशहूर था। उसके बर्तन देश-देशांतरों में जाते थे। सुराहियां ऐसी बनाता, जिनकी गर्दन में से पानी छलकता दिखाई देता। उसके बनाए कटोरे, बादले, गुलदान, तश्तरियां, रकाबियां, टासां, कुज्जे, चिलमें देख-देख कर खरीदारों का मन नहीं भरता था। न जाने कहां से मिट्टी लाता था, न जाने कैसे उसे गूंधता था, पता नहीं कैसे चक्करों पर ढालता था, अपना भेद किसी को मालूम नहीं होने देता था। उसके बर्तनों पर की गई रंगबिरंगी चित्रकारी बेजोड़ होती थी। कई पीढ़ियों से उसके खानदान में यही पेशा चला आ रहा था। अब लोगों का कहना है कि बाकी काम बेशक तुल्ला कुम्हार करता हो, लेकिन चित्रकारी का काम उसकी बेटी सोहनी करती थी— सोहनी जिसकी उंगलियां खां की फलियों जैसी थीं, जिसके हुस्न की कहानियां शहर-शहर, गली-गली में फैली हुई थीं। ढेर सा इल्म पढ़ी हुई थी।

उस दिन इज्जतबेग भी घूमता-घामता तुल्ले के आंगन में चला गया। आंगन क्या था, अच्छा-खासा मुकम्मल कारखाना था। सैकड़ों मजदूर काम कर रहे थे। कई कोठरियां, कई पसार बर्तनों से भरे थे। तुल्ले की कारीगरी देख-देख कर इज्जतबेग को अचंभा हो रहा था। एक से एक बढ़िया बर्तन। एक से एक सुंदर चित्र। रंगों की बानगी देख कर अमीरजादे की आंखों में जैसे ठंडक पड़ गई। बाहर बला की गरमी थी।

तुल्ला खुद बुखारे के अमीरजादे को बर्तन दिखा रहा था। एक पसार से दूसरे में, एक कोठरी से दूसरी कोठरी में। सो घूमते-घूमते वे भीतर वाले कोठे मे पहुंच गए। यहां तुल्ले ने अपना सबसे बढ़िया माल रखा हुआ था। इस माल को कोई धनी आदमी ही खरीद सकता था।

अभी इज्जतबेग ने मुश्किल से कोठे के भीतर कदम रखा ही था कि उसे सामने पर्दे के पीछे चौकी पर बैठी, तुल्ले की बेटी सोहनी की एक झलक दिखाई दी। वह किसी प्याले पर चित्रकारी कर रही थी। एक ही झलक में इज्जतबेग के हाथ में पकड़ा हुआ गुलदान फिसल कर नीचे फर्श पर जा गिरा। गुलदान के टूटने की आवाज से सोहिनी का दिल धक से रह गया। वह उसी तरह रंग की कूंची पकड़े, नंगे सिर, कमरे में आ गई।

सामने इज्जतबेग खड़ा था। ऊंचा, लंबा, तगड़ा और खिला हुआ चेहरा, गर्दन तक फैली चमकदार काली जुल्फें। उधर सोहनी ऐसी, जैसे आसमान से उतरी कोई अप्सरा हो, घबराहट से लाल चेहरा, जल्दी में आने की वजह से चेहरे और माथे पर गिरी जुल्फें। दरवाजे में खड़ी ऐसी लगती थी जैसे किसी ने कोई तस्वीर मढ़ कर रख दी हो।

एक मिनट, दो मिनट, तीन मिनट और फिर तुल्ला कुम्हार गला साफ करता हुआ टूटे गुलदान के टुकड़े उठाने लगा।

उस दिन, और अगले दिन और उससे अगले दिन इज्जतबेग हर रोज तुल्ले के यहां आता और बर्तन पसंद करता और खरीदता रहता। तुल्ले की कई परछत्तियां, कई कार्निसें खाली हो गईं।

फिर एक दिन जब अमीरजादा आया तो तुल्ला कहीं बाहर गया हुआ था। किसी रिश्तेदार के यहां मातम हो गया था। बाप घर में नहीं था। इतने अच्छे ग्राहक को सोहनी खुद बर्तन दिखाने लगी। सारी दोपहर इज्जतबेग बर्तन खरीदता रहा। दोपहर ढल गई, शाम हो गई। फिर पता नहीं क्या हुआ, कैसे हुआ, बर्तन बेचते-बेचते सोहनी खुद अपने आप से भी हाथ धो बैठी। सोहनी को लगा जैसे परदेसी के एक स्पर्श से ही बर्तनों में और के और रंग भर गए हों। ये रंग तो उसे पहले कभी दिखाई ही नहीं दिए थे। एक स्पर्श अपने साजन का, और सोहनी को लगा कि उसके घर की बैठक में कितनी ठंडक पैदा हो गई है। बाहर इतनी ज्यादा गरमी थी और भीतर इतनी ठंडक हो गई थी ! रंझोटे (रांझा) के स्पर्श की देर थी कि सोहनी के भीतर की सलेटी (हीर) का अंग-अंग खिल उठा। वातावरण में नगमे गूंजने लगे।

उधर इज्जतबेग के साथी सौदागर परेशान थे। सारी कमाई उसने मिट्टी के बर्तन खरीदने में बर्बाद कर दी थी। ढेरों बर्तन इकट्ठे कर लिए थे। दो-चार बर्तनों को तो आदमी ढो सकता था, सैकड़ों बर्तन भला कोई कैसे इतनी दूर बुखारे ले जाता ! और फिर इज्जतबेग इस शहर में से निकलने का नाम तक नहीं ले रहा था। सराय में रखे बर्तनों पर धूल-मिट्टी पड़ रही थी। एक-दूसरे के ऊपर रखे बर्तनों में से कुछ तो टूटने भी लगे थे। इज्जतबेग के साथियों को उसके लक्षण समझ में नहीं आ रहे थे।

आखिरकार तंग आकर एक सुबह काफिले ने वहां से कूच कर दिया। इज्जतबेग उनके साथ नहीं गया।

इन दिनों इज्जतबेग का बस एक ही काम था, सारा दिन तुल्ले के कारखाने के चक्कर काटता रहना। कभी चक्कों के पास खड़ा है, कभी आवों के पास, कभी बर्तनों का भाव तय कर रहा है। बस एक बार सोहनी के दीदार हो जाते तो उसे लगता जैसे उसका सारा दिन सफल हो गया हो।

उधर सोहनी का यह हाल था कि परदेसी के एक स्पर्श से ही उसे अपना सब कुछ पराया-पराया सा लगने लगा था। खाना-पीना कुछ अच्छा न लगता, दिन-रात बैठी बर्तनों को रंगती रहती। वही नीले रंग जो उसके साजन को पंसद थे, वही चित्र जो इज्जतबेग को पंसद थे।

तुल्ले का हृदय सब कुछ जानता था, सब कुछ समझ रहा था, लेकिन मुंह से कुछ नहीं कहता था। भीतर ही भीतर हंडिया की तरह उबल रहा था। उसने लाख कोशिशें कीं कि सोहनी के हाथ पीले कर डाले, लेकिन लड़की किसी तरह काबू में नहीं आती थी। उसकी मुसीबत यह थी कि वह भला कैसे अपनी इकलौती बेटी का पल्ला किसी परदेसी के हाथ पकड़ा देता ! काफिले वालों को गए कई हफ्ते हो गए थे, और अब इज्जतबेग के पास कुछ भी नहीं रह गया था, मैले-कुचैले कपड़े, भूखा-प्यासा, पैसे-पैसे के लिए मोहताज।

घोड़ों की देखभाल के सिवा इज्जतबेग को और कोई काम नहीं आता था। न शहर के लोगों की भाषा ही आती थी। आखिर सोच-सोच कर उसने महीवाल (चरवाहा) का

काम शुरू कर दिया। लोगों की गायें-भैंसें, घोड़े-घोड़ियां इकट्ठी कर लेता और उन्हें चराने के लिए बाहर ले जाता। सारा दिन चरागाहों में मवेशियों को घुमाता रहता और खुद अलगोजे बजाता रहता। हर वक्त वह बगल में अलगोजे दबाए रहता। आजकल सोहनी के साथ उसकी मुलाकात चरागाहों में होती थी। तुल्ले के बर्तनों का मोल-तोल करने की अब इज्जतबेग में हैसियत नहीं रही थी।

बुखारे का अमीरजादा इज्जतबेग पंजाब की सोहनी का महीवाल बन गया।

सात पर्दों में रहने वाली कलाकार लड़की सोहनी आजकल जंगल, चरागाहों में भटकती रहती। महीवाल के इश्क में उसे घर का काम-काज जहर मालूम होने लगा। अंतरंग सहेलियों की आड़ में वह सुबह-शाम शहर से बाहर निकल जाती, उसकी सहेलियां कभी नाच कर, कभी गाकर महीवाल का दिल लगाए रखती थीं।

इश्क और मुश्क कभी छिपाए नहीं छिपते। कुछ ही दिनों में सोहनी और महीवाल के इश्क का शोर मच गया। बदनामी से बचने के लिए तुल्ले ने जो भी लड़का उसके हाथ लगा, उसी को सोहनी का पल्लू पकड़ा दिया और खुद निश्चिंत हो गया।

सोहनी मिन्नतें करती रही— "अब्बा, महीवाल से मेरा रिश्ता जनम-जनम का है", लेकिन सारा दिन मिट्टी के बर्तनों में भटकने वाले तुल्ले कुम्हार की समझ में कोई बात न आई।

छल-छल आंसू बहाती सोहनी को डोली में डाल कर ससुराल भेज दिया गया।

झनां के एक किनारे सोहनी के ससुराल वालों का गांव था और दूसरे किनारे पर उसके बाबुल का शहर था, जहां महीवाल सोहनी के विरह में दिन-रात तड़पता रहता था। अकेला, दीवानों की तरह फिरता, 'सोहनी', 'सोहनी' पुकारता और लहू के आंसू बहाता रहता। खाने-पीने की उसे कोई सुध नहीं रही थी। लाख नाजों में पला अमीरजादा तिनकों से भी हल्का हो गया। कितनी अच्छी पंजाबी बोलने लगा था ! और अपनी दिलनवाज जुबान में उसी के गीत गाता रहता। हर बोल में सोहनी। जंगलों-चरागाहों में 'सोहनी', 'सोहनी' की धुन गूंजने लग पड़ी।

उधर सोहनी का भी यही हाल था। महीवाल की याद को सीने से लगाए, उसने अपने पति को अंगीकार करने से इंकार कर दिया। दिन-रात, रात-दिन महीवाल को याद करती रहती, बस महीवाल, और कुछ भी नहीं।

एक दिन बेहाली में घूमते हुए महीवाल को लगा कि सोहनी उसे पुकार रही है। उसने कान लगा कर सुनने की कोशिश की। लेकिन आवाज तो जैसे उसके अंदर से आ रही थी। महीवाल खिलखिला कर हंस पड़ा। यह एक छलावा था। महीवाल दीवानों की तरह ऊंची, और ऊंची आवाज में हंसता जा रहा था। लेकिन आवाज तो आ रही थी। कोई उसे पुकार रहा था— 'महीवाल ! महीवाल !' वह दौड़ कर एक टीले पर चढ़ गया, आगे-पीछे आंखें फाड़ कर देखने लगा। कहीं कोई भी तो नहीं था। लेकिन नहीं, आवाज तो आ रही थी। शायद सामने पेड़ों के झुंड में कोई था। 'महीवाल !' 'महीवाल !'

'महीवाल !' की आवाज आ रही थी। फिर उसकी हर सांस से फूट रही सोहनी की ध्वनि के साथ मिल कर यह आवाज गड़ने सी लगी—'सोहनी महीवाल', 'सोहनी महीवाल !', 'महीवाल सोहनी !' 'महीवाल सोहनी !' महीवाल की समझ में कुछ नहीं आ रहा था। उसे ऐसा लग रहा था, जैसे कोई उसके साथ मजाक कर रहा हो। वहां कोई भी तो नहीं था। कोई उसे पुकारता था और फिर छिप जाता था। कभी लगता जैसे आवाज बाहर से आ रही है, कभी लगता कि आवाज भीतर से आ रही है। 'सोहनी-महीवाल !', 'महीवाल-सोहनी !' अचानक उसे लगा जैसे आवाज दूर एक खाई में से आ रही हो। दौड़ता-दौड़ता महीवाल खाई में उतर गया। उसमें पहुंच कर उसे महसूस हुआ कि आवाज तो बाहर थी। उन्हीं कदमों से वह चढ़ाई चढ़ने लगा, उसकी सांस फूल गई थी। भूखा-प्यासा, नंगे पैर, थका-हारा चढ़ाई चढ़ कर महीवाल जब ऊपर आया तो उसे महसूस हुआ कि आवाज तो खाई के भीतर से आ रही थी, 'सोहनी-महीवाल !', 'महीवाल-सोहनी !' हां, आवाज तो खाई के भीतर से ही आ रही थी। दौड़ कर महीवाल फिर खाई में उतर गया। ज्यों-ज्यों नीचे उतरता, उसे लगता आवाज तो जैसे पीछे छूटती जा रही हो। खाई में पहुंच कर उसे लगा कि सचमुच आवाज तो बाहर थी। ऊपर कहीं से सुनाई दे रही थी, 'सोहनी-महीवाल !' 'महीवाल-सोहनी !' थका टूटा वह पागलों की तरह फिर चढ़ाई चढ़ने लगा। ऊपर पहुंच कर वह आंखें फाड़-फाड़ कर आगे-पीछे देखने लगा। कहां थी वह आवाज ? दूर— बहुत दूर। नजदीक, बहुत नजदीक। झुंझला कर महीवाल ने अपने कपड़े तार-तार कर दिए। पसीने से तर, धूल-मिट्टी से लथपथ वह दीवानों की तरह आगे-पीछे भागने लगा। दौड़ता-दौड़ता वह झनां के किनारे पहुंच गया, शायद आवाज पानी की लहरों में से आ रही थी। हां, आवाज झनां के पानी में से ही आ रही थी। और महीवाल नदी में कूद पड़ा।

एक कोशिश के बाद महीवाल ने ठाठें मार रहे पानी की लहरों के साथ जूझना शुरू कर दिया। पिछला किनारा, दूर पीछे रह गया था और अगला किनारा कहीं दिखाई नहीं दे रहा था। महीवाल बांहें मार-मार कर, टांगें चला-चला कर झनां की उद्धत लहरों को जैसे काटता जा रहा था। आगे ही आगे बढ़ता जा रहा था। फिर उसके कानों में सोहनी की आवाज आने लगी। हां, यह उसी की आवाज थी। 'महीवाल !', 'महीवाल !' जैसे कोई गूंज तड़प रही हो। महीवाल ने बेतहाशा बांहें चलाना शुरू कर दीं, टांगें चलानी शुरू कर दीं। यह तो झनां के किनारे बिलख रही सोहनी ही थी। इतने में किसी मल्लाह की नजर महीवाल पर जा पड़ी, उसने अपनी किश्ती दौड़ा कर महीवाल को किश्ती में चढ़ा लिया।

सचमुच सामने सोहनी खड़ी थी। छल-छल आंसू बहा रही थी। महीवाल बार-बार आंखें मलने लगा। हां, सोहनी ही थी। सह सपना नहीं था। वे उमड़ कर एक-दूसरे की तरफ बढ़े— फैली हुई बांहें। शाम की परछाइयां ठंडे अंधेरे में बदल गईं।

और फिर फैसला यह हुआ कि हर शाम मवेशियों को उनके घर में पहुंचा कर महीवाल सोहनी से मिलने आया करेगा। झनां के किनारे चरागाह में उनकी मुलाकात हुआ

करेगी।

महीवाल ने एक मशक खरीद ली। रात पड़ते ही वह मशक को ठेल कर तैरता-तैरता सोहनी के गांव के किनारे पर पहुंच जाता। अपनी महबूबा का इंतजार करता। बंसी लगा कर मछलियां पकड़ने बैठ जाता या अलगोजे बजाता रहता।

"सोहनिये ! तेरी इंतजार में अलगोजे से निकली तानें सुन कर ढेर की ढेर मछलियां मेरे जाल में आ फंसती हैं," महीवाल कहता।

"वे अड़िया! तू सिर्फ एक ही मछली पकड़ा कर," जवाब में सोहनी हंस कर कहती।

हर शाम महीवाल एक मछली पकड़ कर सोहनी का इंतजार करता था। सोहनी आती और वे दोनों मछली भून कर खाते थे।

महीवाल के साथ बैठ कर मछली खाना सोहनी को बहुत अच्छा लगता था— मछली खाना और बातें करना। लगातार बातें करती रहती। सारी-सारी रात बातें करती, भोर होने पर दबे कदमों से जाकर धीरे से अपनी चारपाई पर पड़ जाती।

एक दिन झनां में कहर की बाढ़ आई हुई थी। बरसात के दिन थे। ऐसा लगता था कि नदी के ऊपर की तरफ कहीं बारिश हुई थी। अपने किनारे तोड़ कर झनां कहीं की कहीं पहुंच गई थी। फसलों को बहा रही थी। कुओं को गोते दे रही थी। महीवाल जैसे-तैसे सोहनी के किनारे पहुंच गया, लेकिन आज मछली कैसे पकड़ी जाए ? महीवाल बहुत देर तक भटकता रहा, उसे कहीं मछली दिखाई न दी। पानी मटमैला था, नदी अपने साथ झाड़ियां, कांटे और कूड़ा-कबाड़ बहा कर लाई थी। मछली कहीं भी नहीं थी कोई। और फिर नदी ने तो मीलों तक अपने किनारे रौंद डाले थे। कोई बंसी कहां डालता ? जाल कहां डालता ? ऊधर सोहनी के आने का समय नजदीक आता जा रहा था। महीवाल सोच रहा था कि वह भला खाली हाथ अपनी महबूबा से कैसे भेंट करेगा! फिर आंख झपकते ही उसे कोई बात सूझी और उसके होंठों पर मुस्कुराहट खेलने लगी।

लेकिन उस दिन महीवाल वह कुछ नहीं कर सका जो उसने सोचा था। क्या पता, उसके पास अपनी मनमर्जी करने के साधन नहीं थे ! सोहनी ठीक अपने समय पर आई। महीवाल से बार-बार मजाक कर रही थी, मैंने तो आजकल ससुराल में रात को रोटी खाना ही बंद कर दिया है। जिसे महीवाल के साथ बैठ कर खाना नसीब हो, उसके गले के नीचे किसी और जगह एक कौर कैसे उतर सकता है !" यह सुन कर महीवाल पानी-पानी हो गया। धरती जगह नहीं देती थी कि उसमें समा जाता।

अगले दिन बारिश और तूफान वैसे ही था। उसी तरह बारिश की झड़ी लगी हुई थी। उसी तरह नदी में उफान था। महीवाल ने लाख जतन किए, लेकिन आज भी कोई मछली उसके हाथ न लग सकी। लेकिन आज रात जब सोहनी आएगी, महीवाल को शरमिंदा नहीं होना पड़ेगा, उसने अपनी महबूबा की खातिर का पूरा प्रबंध कर रखा था।

ठीक समय पर सोहनी छप-छप करती आई, मुस्कुराहटें बिखेरती। हर रोज नया रंग,

हर रोज नया रूप, हर रोज नया स्वाद ! मुहब्बत में औरत एक पतंग की तरह होती है, ऊपर ही ऊपर चढ़ने वाली, आसमानों को छूने वाली।

कुछ देर के बाद वह महीवाल की मछली की बोटियों को कांटे में पिरो कर सेंकने लगी।

"आज यह तेरी कैसी मछली है कि सिंकने में ही नहीं आ रही ?"

"हां !"

"कितना वक्त ले रही है ?"

"हां !"

चिलम पीता हुआ महीवाल जैसे अपने खयालों में खोया था।

और फिर जब वे मछली खाने बैठे तो सोहनी को यकीन हो गया, कोई न कोई बात जरूर थी। आज की मछली का स्वाद कुछ और ही था। सोहनी की ऊपर की सांस ऊपर और नीचे की सांस नीचे रह गई। उसने देखा, महीवाल की लुंगी का पल्ला खून से तर था।

"यह लहू कहां से लगा ?" सोहनी ने आगे बढ़ कर उसकी लुंगी के पल्ले को हाथ लगा कर देखा।

और फिर महीवाल उसकी बांहों में ढेर हो गया।

अपनी महबूबा की खातिर महीवाल ने अपने मांस की बोटियां उतार कर आज रात उसे भेंट की थीं। उसे मछली जो नहीं मिली थी और आज की रात भी वह सोहनी को भूखी-प्यासी लौटा देता ? सोहनी जो कितने दिनों से रात का खाना महीवाल के बगैर किसी दूसरे के साथ खा ही नहीं सकती थी !

महीवाल मुहब्बत के किस शिखर पर पहुंच चुका था ! सोहनी उसके होंठों, उसके गालों, उसकी पलकों, उसके माथे को चूम-चूम कर उसे होश में ले आई। बार-बार उसके होंठों के साथ सोहनी के होंठ जुड़ जाते थे और वे दोनों एक-दूसरे को जैसे घूंट-घूंट पी रहे थे। उस रात सोहनी जैसे एक लौ की तरह महीवाल के अंग-अंग में फैल रही थी। वह महीवाल के रोम-रोम से लाड़ कर रही थी, दुलार कर रही थी। सुबह हो गई, उसके जाने का समय हो गया, तो भी उसका दिल महीवाल से बिछुड़ना नहीं चाहता था।

आखिर जब मजबूर होकर वह वहां से चली, तो उसने महीवाल से वचन लिया कि अगली शाम और उसके बाद, वह सोहनी के किनारे नहीं आएगा, बल्कि सोहनी उसके किनारे पर पहुंचा करेगी। जख्म भरने तक महीवाल पानी में नहीं उतरेगा। अब वह वापिस भी किश्ती में जाएगा और फैसला यह हुआ कि वे भूरी कमली वाले दरवेश के हुजरे में मिला करेंगे।

इतने फैसले करते, इतनी बातें करते हुए आज सोहनी को देर हो गई थी। चुपके से जब वह अपने आंगन में दाखिल हुई तो उसे लगा जैसे लाखों आखें उसकी तरफ घूर-घूर कर देख रहीं थी। उसकी सास और ननद अपनी चारपाइयों पर झूठ-मूठ आंखें मूदें पड़ी थीं।

अगली सुबह सोहनी को अपनी ननद और सास से जैसे सेंक आ रहा था। उसे लगा

जैसे उसका नाजुक बदन झुलस जाएगा। वे दोनों जैसे बैर और जलन की सुलगती हुई चिताएं हों। अपने भरे आंगन में सारा दिन सोहनी को ऐसा महसूस होता रहा जैसे उसका दम घुट कर रह जाएगा। उसे अपने आस-पास के वातावरण से एक सड़ांध सी आती महसूस हो रही थी। घर के भीतर, कोनों में खड़े लोग जैसे काना-फूसी कर रहे हों, साज़िशें कर रहे हों।

जैसे-तैसे करके रात हुई, शुक्र-शुक्र करते लोगों की आंख लगीं। उधर आंगन में ज्यों ही लोग सोए, सोहनी अपने महीवाल से मुलाकात करने के लिए निकल पड़ी। झनां पार करने के लिए उसने रसोई में से एक घड़ा उठा कर बगल में रख लिया।

उधर से सोहनी बाहर निकली, इधर से उसकी दुष्ट ननद जो सोने का बहाना करके लेटी हुई थी, दबे पांव उसके पीछे हो ली। उसकी सास अपनी चारपाई पर पड़ी मन ही मन विष घोलती रही।

अपने आंगन से निकल कर सोहनी तेजी से झनां के किनारे पहुंची। आज नदी बिलकुल शांत थी, जैसे उसे कभी कुछ हुआ ही न हो। सोहनी ने न आगे देखा न पीछे, महीवाल से मिलने की उत्सुकता में वह नदी में तैरने लग पड़ी। उसकी ननद हाथ मलती रह गई। उसके देखते ही देखते सोहनी अदृश्य हो गई।

सारी रात सोहनी की ननद उसी तरह झनां के किनारे बैठी मनसूबे बनाती रही और दांत पीसती रही। भोर होने लगी तो उसने देखा, सामने सोहनी उसी तरह घड़े पर तैरती आ रही थी।

उसकी ननद का जी चाहता था कि चोर को सेंध लगाते हुए पकड़ा जाए, लेकिन वह ऐसा न कर सकी। एक सघन बरगद के नीचे खड़ी बस देखती रही।

सोहनी झनां में से निकली। उसने अपने कपड़ों को निचोड़ा। हाय कितनी बांकी लड़की थी ! चांदनी में उसका रंग-रूप जैसे चकाचौंध पैदा कर रहा था। उसकी ननद टुकर-टुकर आंखों से उसकी तरफ देखती रही और सोहनी अपने घड़े को एक झाड़ी में छिपा कर घर की तरफ चल पड़ी। सुबह होने से पहले वह अपनी चारपाई पर जाकर लेट गई। गरमियों के दिन थे। उसके कपड़े रास्ते में ही सूख गये थे।

सोहनी की ननद ने अपनी मां को सारी बात बताई। ननद ईर्ष्या से जल उठी थी। उम्र में वह सोहनी से कहीं ज्यादा बड़ी हो गई थी और अभी कोई वर नहीं मिला था और उधर सोहनी थी जो शादी के बाद एक खाविंद को छोड़ कर किसी आशिक के साथ प्रेम की पेंगें चढ़ा रही थी।

आखिर मां-बेटी ने फैसला किया कि जो लड़की उनके लड़के को दगा दे रही थी, उसे जान से ही खत्म कर देना चाहिए। उसकी ननद ने चक के पास रखा एक कच्चा घड़ा उठा कर झनां के किनारे झाड़ी में रखे पक्के घड़े से बदल दिया।

अगली रात सोहनी ठीक समय पर उठ कर बाहर निकल गई। महीवाल से मिलने का इकरार था, वह तीर की तरह सीधी झनां के किनारे पर पहुंची, उसने झाड़ी में से घड़ा उठाया

और पानी में उतर पड़ी।

पूर्णिमा की रात थी, लेकिन नदी आज फिर उफान में थी। महीवाल से मिलने की उत्सुकता में सोहनी जैसे उसकी लहरों पर फिसलती जा रही थी। वह ज्यादा आगे नहीं बढ़ी थी, कि उसने महसूस किया कि उसकी बांहों में रखा घड़ा जैसे भुरभुरा रहा हो। सचमुच यह तो कच्चा घड़ा था, कीचड़-कीचड़ हो गया था। सोहनी नदी के बीचों-बीच पहुंच चुकी थी।

सामने किनारे पर भूरी वाले साईं का हुजरा था, जिसमें उसका महीवाल सोहनी की राह देख रहा था। सोहनी ने महीवाल को पुकारना शुरू कर दिया। नदी में तूफान उमड़ आया था। आंधी कहे कि बस आज ही का दिन ! पानी के थपेड़े सोहनी को बेहाल कर रहे थे। सोहनी बार-बार महीवाल को पुकार रही थी, वह पानी की लहरों में गोते खा रही थी। हर बार जब सोहनी महीवाल को पुकारती तो पिछले किनारे पर खड़ी उसकी ननद ठहाके मार-मार कर हंसती। तूफानी रात में उसकी हंसी की आवाज चुड़ैलों की तरह गूंज रही थी।

और फिर महीवाल ने सोहनी की पुकार सुन ली। छड़ी के सहारे लंगड़ाता हुआ वह हुजरे से बाहर निकल आया। हाय, कितना खूबसूरत गबरू जवान था ! इस बार जब सोहनी ने पुकारा तो महीवाल बिना किसी हीले या दलील के, उसी हालत में, जख्मी टांग समेत नदी में कूद पड़ा।

महीवाल के दरिया में कूदते ही जोर से तूफान का एक झोंका आया। पानी के बहाव में सोहनी और महीवाल दोनों एक-दूसरे की बांहों में थे। क्षण, दो क्षण के लिए उसकी ननद ने उन्हें देखा और फिर जैसे नदी की लहरों ने उन दोनों को दबोच लिया। इसके बाद वे कहीं दिखाई नहीं दिए—न सोहनी, न महीवाल। वे एक-दूसरे की बांहों में लिपटे झना के पानी में उतर गए। सामने किनारे पर खड़ी सोहनी की ननद टुकर-टुकर देखती रह गई।

पूरन भगत

शिवकुमार

एक था राजा। उसका नाम सलवान था। सलवान शालिवाहन से बिगड़ कर बना है। यह जाति कभी हिंदुस्तान पर राज्य करती थी। 'अटलाना' हूण उनका पूर्वज था। सलवान हूणों की ही एक जाति थी। वैसे तो कुछ विद्वान यह भी कहते हैं कि वह राजा विक्रमादित्य के वंशजों में से था।

राजा सलवान पंजाब के एक शहर सियालकोट में राज्य करता था। उसकी रानी का नाम इच्छरां था। उन्हें पूर्वजन्म के किसी पाप के फलस्वरूप ऋषि मछिंदरनाथ ने शाप दे दिया था, "जाओ, जब तुम धरती पर जन्म लोगे तो तुम्हारी आपस में कभी नहीं पटेगी। तुम्हारे घर औलाद होगी, लेकिन वह मेरी तरह सारी उम्र कानों में छल्ला डाले फिरेगी।" सो सलवान के घर एक पुत्र ने जन्म लिया। उसकी सूरत ऐसी थी, जैसे सौ साल के बूढ़े सांप की मणि हो। जब पूरन का जन्म हुआ तो शहर की गलियां, बाजार और मुंडेर तेल से चिकने हो गए। दीये जले, आतिशबाजों ने रंग जमा दिए। ऐसा लगता था, जैसे शहर की छत पर अरबों तारे टूट रहे हों। विधवाओं का वैधव्य कट गया। घुंघरुओं की छनछन ने सारा शहर हिला दिया, जैसे आसमान पर कलई करने के बाद परियां नाच रही हों।

लेकिन अफसोस ! ज्योतिषियों ने सलवान से कहा—"बारह वर्ष तक तुम अपने बेटे का मुंह मत देखना। यह तुम पर भारी है। पूरन के मत्थे लगना अपशकुन होगा। अगर तुमने ऐसा न किया तो तुम्हारा राजपाट तबाह हो जाएगा।"

संसार से संबंध पक्का होना तो दूर रहा, सलवान के लिए तो जैसे दहेज के रंगीले सूत वाले पलंग की अदवायन ही टूट गई हो।

राजा सलवान ने एक तहखाना बनवाया और अपने बेटे पूरन को बारह बरस के लिए उसमें उतार दिया। उधर दूध से इच्छरां की छातियां अकड़ गईं, जैसे प्रसूति में ही किसी का बच्चा मर गया हो। वह दीवारों पर दूध की धारें छोड़ती थी और सलवान दीवारों से सिर टकराता था।

इस हादसे के बाद राजा सलवान बड़ा उदास रहने लगा। वह अपने महल के नीचे लगे तख्त के पास जाता था, लेकिन तख्त पर बैठता नहीं था। घर लौटता था तो घर में जी नहीं लगता था। इसलिए कुछ साल इंतजार करने के बाद उसने चमार जाति की एक लड़की

से दूसरी शादी कर ली। इस लड़की का नाम लूणा था, और वह उम्र में राजा से बहुत छोटी थी।

आखिर बारह बरस तहखाने में रह कर जब पूरन बाहर आया तो राजा सलवान ने उसे बहुत प्यार किया, फिर उससे कहने लगा—"जा, मेरे बेटे, जाकर अपनी दोनों मांओं से मिल आ।"

बारह बरस एकांत में रहने के कारण पूरन पहले से ही उदास था, पिता की दूसरी शादी की बात सुन कर और भी उदास हो गया।

उधर कवि कादरयार के शब्दों में लूणा इतनी हसीन थी कि—

दिस्से सूरत चंद मेहताब जेही,
जदों बैठदी सी जेवर लाइके जी ।
कादरयार की आख सुणावसां मैं,
पंछी डिगदे सी दरशन पाइके जी ।[1]

अपनी मां रानी इच्छरां से मिलने के बाद जब पूरन अपनी सौतेली मां लूणा के महल में गया जो लूणा उसका रूप देख कर चौंधिया गई। उसके पेट में कल्लरियां पड़ गईं। एक तो जवान, फिर हम-उम्र। ऊपर से रूप का गुमान ! लूणा पूरन को देख कर कहने लगी, "पूरन ! मैं तो तेरी हम-उम्र हूं। तू मुझसे प्यार कर। मैं तेरी मां नहीं, प्रेमिका हूं।"

पूरन का रूप और उसकी जवानी देख कर वह कुठाली में पड़े सोने की तरह पिघल गई। इस क्षण को कादरयार ने अपने किस्से में इस तरह बयान किया है :

स्वाद सूरत दी ताब न गई झल्ली,
लूणा पूरन नूं वेख के तुरत उट्ठी ।
पूरन नजर आया, राजा भुल्ल गया
सिर पैर तोड़ी अग्ग भड़क मट्ठी ।
दिलों पुत्तर नूं यार बना बैठी
ओदो साबती दी विच्चों लज्ज टुट्टी ।
कादरयार त्रीमत्त हैं सियारी,
वेखो लग्गी वगान जे नदी पुट्ठी ।[2]

जब पूरन ने लूणा द्वारा प्रस्तावित यह रिश्ता ठुकरा दिया तो पूरन से बदला लेने के लिए लूणा ने एक चाल चली। जब राजा सलवान लूणा के महल में आया, तो देखता है कि महल में दीया-बत्ती गुल है। सलवान ने लूणा से इसका कारण पूछा। कारण क्या खाक

---

1. उसकी सूरत चांद जैसी थी। कादरयार कहता है कि उसकी सूरत का क्या बयान करूं, जब वह जेवर पहन कर बैठती थी तो पक्षी भी उसके दर्शन के लिए नीचे आ जाते थे।
2. कमनीय सूरत की ताब वह झेल न सकी। पूरन को देख कर लूणा मोहित हो गई। उसे राजा भूल गया, सिर्फ़ पूरन ही दिखाई देने लगा। वह सिर से लेकर पैर तक आग में जलने लगी। मन ही मन वह बेटे को प्रेमी मान बैठी। कादरयार कहता है, देखो यह जालिम औरत उल्टी नदी बहा रही है।

था ! उसने अपना त्रियाचरित्र दिखाया। कह दिया, "पूरन मेरी इज्जत लूटना चाहता था। उसने मुझे बांह से पकड़ कर सेज पर ढकेल दिया था। लेकिन मेरे शोर मचाने पर वह भाग गया।"

यह सुन कर राजा सलवान को बेहद गुस्सा आया, उसने पूरन के हाथ-पैर कटवा कर उसे किसी अंधे कुएं में फेंकने का हुक्म दिया।

इस खबर से सारे राज्य में हाहाकर मच गया। आकाश में लाल रंग की आंधी छा गई। औरत-जात का क्या भरोसा ? राजा ने झूठे इलजाम में पूरन को मरवा डाला था, कम से कम राजा का तो यही खयाल था। लेकिन जिसका ईश्वर रखवाला हो, भला एक कामुक औरत उसका क्या बिगाड़ सकती थी ? कई दिनों तक बेचारा पूरन उस अंधे कुएं में चुल्लू भर पानी पीकर ईश्वर का भजन करता रहा। ईश्वर की करनी ऐसी हुई कि एक दिन गुरु गोरखनाथ और उनके चेले देश-देशांतर में घूमते हुए उस कुएं के पास आ निकले। पानी पीने के लिए जब चेलों ने कुएं में रस्सा डाला तो भीतर से 'राम-राम' की आवाज आई। चेले समझे कि कुएं में कोई भूत-प्रेत है। वे भयभीत होकर गुरु गोरखनाथ के पास गए और उन्होंने सारी बात कह सुनाई। यह बात सुन कर गुरु गोरखनाथ खुद कुएं के पास आ गए। उन्होंने पूछा, "यह किसकी आवाज है ? जानते हो मैं कौन हूं ? मैं गोरखनाथ हूं। नौ निधियां, आठों सिद्धियां, बावन जोगिनें मेरे वश में हैं। तुम कुएं से बाहर आ जाओ।" लेकिन कुएं में से आवाज आई, "महाराज, पहले मुझे कुएं से बाहर निकालिए। मेरा नाम पूरन है। मेरे मां-बाप ने मेरे हाथ-पैर कटवा कर मुझे यहां फिंकवा दिया है।"

गुरु गोरखनाथ ने पूरन को कुएं में से निकाला। उसे लाड़-प्यार किया और उसकी पूरी बात सुनी। लेकिन गुरु गोरखनाथ तो सर्वज्ञ थे। उनके चमत्कार से पूरन के हाथ-पैर, नाखूनों समेत ज्यों के त्यों हो गए और पूरन की प्रार्थना पर, उन्होंने उसे अपना चेला बना लिया। गुरु गोरखनाथ उसे अपने साथ अपने टीले पर ले गए। पूरन को जोगी बना कर उन्होंने उसके कानों में छल्ले डाल दिए। पूरन की आस्था की परीक्षा लेने के लिए उन्होंने उसको नजदीक के एक शहर की रानी के पास भिक्षा लेने के लिए भेज दिया। इस रानी का नाम सुंदरां था और वह अपनी सुंदरता के कारण दूर-दूर तक मशहूर थी। पूरन ने रानी सुंदरां के महलों के नीचे जाकर अलख जगाई। रानी की दासियां भिक्षा डालने के लिए आईं। वे पूरन की सुंदरता देखकर दंग रह गईं। पूरन ने दासियों से भिक्षा लेने से इंकार कर दिया और कहा, "रानी से कहो कि खुद आकर मुझे भिक्षा दे।" दासियों ने पूरन का संदेश सुंदरां को पहुंचा दिया और उसके हुस्न की तारीफ भी रानी सुंदरां के सामने की। जब सुंदरां ने महल की खिड़की में से दरवाजे पर खड़े पूरन की तरफ देखा तो वह उस पर मोहित हो गई। उसने हीरे-मोतियों से थाल भर कर पूरन को भिक्षा डाल दी।

पूरन ने जब टीले पर जाकर ये हीरे-मोती गुरु गोरखनाथ को भेंट किए तो गोरखनाथ बोले, "बच्चा ! हमने तुम्हें भोजन की भिक्षा लाने के लिए कहा था, न कि हीरे-जवाहरात की। ये हमारे किस काम के हैं ?" अगले दिन पूरन ने रानी सुंदरां के हीरे लौटा दिए और

भोजन की भिक्षा मांगी। पूरन तो सुंदरां के दिल में बस चुका था। रानी भोजन तैयार करवा कर दासियों समेत गुरु गोरखनाथ के टीले पर पहुंची। गोरखनाथ रानी की सेवा-टहल से बड़े खुश हुए। कहने लगे, "बोलो, क्या मांगना चाहती हो ?" रानी ने पूरन को मांग लिया।

रानी कहिं दी, नाथजी, जे हो तुसी दियाल
पूरन मैंनूं बख्श देयो, मेरा यन्न सवाल।[1]

गुरु की आज्ञानुसार पूरन सुंदरां के साथ चल पड़ा, लेकिन कहां हुस्न, इश्क की आग और कहां जोगी ! पूरन किसी बहाने से सुंदरां के पास से खिसक गया और फिर गोरखनाथ के पास आ गया। उसने आकर अपनी भूल के लिए माफी मांगी। उधर सुंदरां ने पूरन के वियोग में महल की खिड़की में से छलांग मार कर आत्महत्या कर ली।

इसी तरह कुछ बरसों बाद गुरु गोरखनाथ ने पूरन को अपने मां-बाप के दर्शनों के लिए सियालकोट भेज दिया। पूरन उसी बाग में आकर टिक गया जो बरसों से सूखा पड़ा था। ईश्वर की लीला देखिए, सारा बाग हरा-भरा हो गया। सारे शहर में चर्चा होने लगी। लोग पूरन के दर्शनों के लिए आने लगे और मन-मांगी मुरादें पाने लगे।

राजा सलवान भी रानी लूणा समेत पुत्र से याचना करने के लिए पूरन के सामने हाजिर हुआ। राजा ने कहा, "मेरे घर में कोई औलाद नहीं हुई। मुझे औलाद बख्शिए।" जवाब में पूरन ने कहा :

ऐस इलम साडे बिच्च आंवदा ऐ,
अग्गे तुसां घर पुत्त होया।
किसे दिन उजाड़ लिजा उसनूं,
वांग बकरे दे तुसां है कोहिया।[2]

सलवान ने शर्मिंदा होकर बताया कि उसके बेटे का दिल सौतेली मां के लिए बेईमान हो गया था। इसीलिए उसे मौत के घाट उतार दिया गया था। पूरन ने रानी लूणा से सीधे कहा, "अगर औलाद चाहिए तो सच्ची बात बताओ।" जोगी के क्रोध से डर कर और औलाद के लालच में रानी लूणा ने अपना कसूर मान लिया।

यह सुन कर राजा सलवान को इतना गुस्सा चढ़ा कि उसने लूणा को मारने के लिए तलवार खींच ली। लेकिन पूरन ने यह कह कर राजा का गुस्सा ठंडा किया, "अब गुस्से से क्या फायदा, जो आपके बेटे की किस्मत में था, वह तो हो गया।" फिर रानी लूणा को चावल का एक दाना देकर पूरन ने कहा, "इसे खाने से तेरे घर बड़ा सूरमा बेटा जनमेगा।" पूरन की अंधी मां भी जोगी की शोहरत सुन कर मिलने के लिए आ गई।

---

1. रानी ने कहा—नाथजी ! अगर आप दयालु हैं तो मुझे पूरन दे दीजिए। मेरा यही सवाल है।
2. मुझे ऐसा लगता है कि पहले भी आपके घर बेटा हुआ था। आपने किसी दिन उजाड़ स्थान पर ले जाकर उसे बकरे की तरह जिबह किया था।

मीम-मिलन आई चल इच्छरां वी, लोका आखेदा आया है साध कोई,
तेरे पुत्त दा बाग वीरान होया, लग्गा करन है फेर आबाद कोई।[1]

पूरन ने जब दूर से ही, ठोकरें खाती हुई अपनी मां को आते देखा तो उसके भीतर मोह का ज्वार उमड़ आया। उसने उठ कर मां के आगे सिर नवाया और कहा, "मां, ऐसा लगता है कि रो-रोकर तेरी आंखें चली गई हैं !"

"हां बेटा ! बारह साल हो गए हैं, मेरे बेटे को सता-सता कर मार डाला गया है, उसके वियोग में रो-रोकर मैं अपनी आंखें गवां बैठी हूं।" पूरन ने कहा, "मां, पुत्र-वियोग बड़ा कठिन होता है। लेकिन क्या कभी मरे हुए भी जिंदा हो सकते हैं ? तूने क्यों रो-रोकर अपने को घुला लिया है ?"

मां ने पूरन की आवाज़ पहचान ली :

लाम-लई आवाज पछाण माता, सच-सच आख बेटा कित्थों आया है
केड़ा मुल्क तेरा, किसदा पुत्त है तू, किस मां करमांवाली जाया ए ?
अक्खी दिस्से तां सूरतों लब्ब लवां बोली वल्लों मैं पुत्त अजमाया ए
कादरयार आखे दस्सीसार मैनू इक भुल्ली नूं पुत्त मिलाया ए।[2]

पूरन ने भी मां को बता दिया, "मैं तुम्हारा बेटा पूरन ही हूं।"

जब राजा सलवान और लूणा को पता चला तो वे बहुत शर्मिंदा हुए। धरती फटती नहीं थी कि वे उसमें समा जाते। राजा सलवान ने पूरन का राजतिलक करके सिंहासन पर बैठने के लिए कहा। लेकिन पूरन के मन में तो और ही बातें थीं। उसके भीतर तो जोगी का सिंहासन था। उसने अपने पिता से कहा, "इस सिंहासन पर मेरा भाई बैठगा जो बहुत बड़ा महाराजा बनेगा। आप मेरी माता रानी इच्छरां का खयाल रखिएगा।" फिर पूरन योग-साधना की आज्ञा लेकर और अपनी मां को फिर एक बार मिलने का वचन देकर अपने गुरु गोरखनाथ के टीले पर चला गया।

---

1. चलकर इच्छरां भी मिलने आई। लोगों ने कहा कोई साधु आया है, तेरे बेटे का जो बाग वीरान हो गया था, उसे फिर से आबाद करने लगा है।
2. मां ने आवाज पहचान कर कहा, "बेटा, सच-सच बता, कहां से आया है, तेरा मुल्क कहां है, तू किसका बेटा है, किस खुशकिस्मत मां ने तुझे पैदा किया है ? अगर मेरी आंखें होतीं तो मैं तेरी सूरत देखती—तेरी आवाज से मैंने कुछ अनुमान लगाया।" कादरयार कहता है कि ईश्वर ने मुझ भटकी हुई को अपने बेटे से मिला दिया है।

राजा रसालू

हरिभजन सिंह

राजा सलवान ने अपने इकलौते बेटे पूरन को मौत की सजा सुनाई थी। अपनी तरफ से तो उसने इंसाफ किया था, हक वाले का हक दिया था। लेकिन उसका मन खुश नहीं था। दो रानियां थीं, और दोनों की गोद खाली थी। इतना बड़ा राज्य और महल, अटारियां थीं, लेकिन कहीं कोई रौनक नहीं थी। राजा की उम्र ढल रही थी और राज्य का कोई वारिस पैदा नहीं हुआ था। बड़ी रानी, पूरन की मां इच्छरां रो-रोकर अंधी हो चुकी थी और छोटी रानी लूणा का जोबन ढलता जा रहा था, अभी तक उसकी गोद हरी नहीं हुई थी। उसके भीतर कोई गहरा जख्म था जो हर रोज रिसता रहता था। वह डरती थी कि कहीं लापरवाही में आकर, सपने में या हेकड़ी में वह अपने किए पाप की कहानी खुद ही न जाहिर कर बैठे। बरसों से उसने सिंगार नहीं किया था। न वह रूठी थी, न राजा ने मनाया था। इस महल में हर चीज जैसे खो गई थी। दास-दासियां भी परछाइयों की तरह घूमते-फिरते थे।

एक दिन खबर आई कि एक जोगी पूरन के कुएं पर आकर उतरा है। बरसों से इस कुएं में से किसी ने पानी नहीं निकाला था। आसपास का बागीचा सूख गया था। यहां तक कि कुएं के पानी में भी काई लग गई थी। लोग इस अपशकुन वाले बाग में सैर करने भी नहीं जाते थे। लेकिन जोगी के आने से कुएं में से पानी निकाला जाने लगा, बाग हरा-भरा हो गया और श्रद्धालु लोगों की भीड़ भी जुड़ने लगी। जोगी की महिमा राजमहल तक भी पहुंची। लोगों का कहना है कि राजमहल की मुंडेर पर एक सफेद कौआ आ बैठा। इच्छरां और लूणा दोनों को ऐसा लगा जैसे बेटे ने मां को आवाज दी हो। उन्होंने नंगे पैर जोगी के दर्शनों के लिए जाने का फैसला किया।

रानी इच्छरां बारह बरस से तहखाने में पड़ी रही थी। आज पहली बार अपने शोक-महल में से गुलाबी जोड़ा पहन कर बाहर निकली। यह खबर महक की तरह सारे शहर में फैल गई। कोचवान घोड़ा-बग्घी जोड़ कर राजमहल की ड्योढ़ी पर हाजिर हुआ। लेकिन पगली मां मोह के धागों से खिंची नंगे पैर ही ठोकरें खाती हुई चली जा रही थी। उसकी अंधी आखें भी अपने बेटे के बाग का रास्ता पहचानती थीं। आगे-आगे रानी, पीछे-पीछे घोड़ा-बग्घी। रानी के आने से पहले ही रानी की खबर पूरन के कुएं तक पहुंच चुकी थी।

जोगी ने अपनी मां को लड़खड़ाते हुए अपनी तरफ आते देखा, तो वह अपने आसन से उठ बैठा। आधा रास्ता चल कर खुद मां तक पहुंचा और खुद उसकी बांह थाम ली। इस तरह मां-बेटा चले जा रहे थे, तो इच्छरां ने कहा, "तेरा स्पर्श तो मेरे बेटे जैसा है। तू तो मेरा जोगी बेटा है ?"

जोगी भी द्रवित हो उठा। उसे भी बरसों बाद मां का स्पर्श नसीब हुआ था। उसने कहा, "मां, मैं तेरा बेटा जोगी हूं!"

पूरन के बाग की तरह ही पूरन की मां भी हरी-भरी हो उठी। उसकी आंखों की ज्योति लौट आई, छाती में से दूध की धारा फूट निकली।

इच्छरां के पीछे-पीछे ही सलवान और लूणा चले आ रहे थे। देखने वालों को लगा, जैसे पाले के मारे पेड़ चले हुए आ रहे हों। क्या पूरन इन्हें भी अपने स्पर्श से हरा-भरा कर देगा ? पूरन ने अपने बूढ़े उदास पिता को अपनी ओर आते देखा तो अपने आसन पर ही उठ कर खड़ा हो गया। सलवान धूनी के पास पहुंचा तो उसने झुक कर नमस्कार किया। राजा दंग रह गया। उसने कहा, "जोगी, मुझ पर इतना बोझ मत डालो। मैं तो तुम्हारी धूनी में से एक चुटकी भभूत लेने के लिए आया हूं। तुम्हारी कृपा का याचक हूं।"

"राजा, यह धूनी तुम्हारी ही बख्शी हुई है, जो चाहो ले जाओ।"

राजा हैरान था। उससे कुछ बोला नहीं जा रहा था। लेकिन पुत्र-विहीन लूणा कैसे चुप रहती ? बोली, "जोगीराज, अगर कृपालु हुए हो तो राजा को बस सिर्फ एक बेटे का दान दो।"

जोगी ने कहा, "राजा का एक बेटा तो पहले ही से है।"

राजा की आंखों से आंसू बह निकले। बोला, "जोगी, बेटा था, अब नहीं है। अगर हो तो आज ही मैं उस कुकरमी को वापिस ले आऊं। बे-औलाद मरने से तो..."

जोगी ने बात काट कर कहा, "नहीं, राजा, तेरा बेटा अभी भी है। वह कुकरमी भी नहीं और तू उसे घर भी वापिस नहीं ला सकता।"

राजा जानता था कि जोगी झूठ नहीं बोला करते। उसने कहर-भरी नजर से लूणा की तरफ देखा। लूणा तो पहले ही पत्थर बनी बैठी थी। उसकी आंखों से आंसू बह निकले। एक तो जोगी के चेहरे पर इतना तेज था कि उसके सामने झूठ बोलने का साहस कैसे होता ? और फिर राजा की भी आंखों में क्षोभ भरा था। और रानी खुद बेटे का वरदान मांगने जोगी के डेरे पर आई थी। उसने रोते-रोते अपने गुनाह का इकबाल किया : "पूरन में कोई कसूर नहीं। मेरी अक्ल पर ही परदा पड़ गया था, मैं उसके रूप का तेज झेल न सकी, मैं धरम से डिग गई।"

राजा ने तलवार निकाल कर लूणा की गर्दन उतारनी चाही, लेकिन पूरन ने उसकी बांह पकड़ ली और कहा, "राजा, जो कुछ भी हुआ, भला ही हुआ। किसलिए खफा होता है ? तुम्हारा बेटा अभी भी जीता-जागता है और तुम्हारे सामने प्रत्यक्ष बैठा है।"

सब लोगों ने उसे टकटकी लगा कर देखा और पहिचानने की कोशिश की, तो उन्हें

जोगी की सूरत में राजकुमार की शक्ल दिखाई दी। उन्होंने जोगी को आलिंगन में लेना चाहा, लेकिन जोगी अपनी धूनी में से जलती हुई लकड़ी लेकर खड़ा हो गया। उसने कहा, "राजा, हम मोहमाया के रिश्ते तोड़ चुके हैं। अब हम दोबारा बाप-बेटा नहीं बन सकते। निराश मत होओ, तुम्हारा बेटा जहां भी जाएगा, तुम्हारे कुल की महिमा बढ़ाएगा। जहां भी पूरन जोगी का जिक्र होगा, वहीं राजा सलवान का भी नाम लिया जाएगा। राज-पाट तो ढलती परछाईं है, लेकिन धरम की कहानी युगों-युगों तक अटल रहती है।"

लूणा बोली, "मेरे कारण राजमहल सूना है। जब तक राजा का बेटा महल में नहीं जाता, तब तक मैं भी महल में पैर नहीं रखूंगी। जोगी बेटा, जब तक तू घर नहीं लौटेगा, मेरे माथे से कलंक नहीं मिटेगा। अगर बखशने ही लगा है तो सारा गुनाह बखश दे। अपने घर लौट चल।"

जोगी ने भिक्षा के खप्पर में से चावल का एक दाना उठा कर लूणा की हथेली पर रख दिया और कहा, "माता, जा, अपने घर लौट जा। तुम्हारे साथ-साथ तुम्हारा बेटा भी घर जाएगा। तेरी कोख भी इस बाग की तरह हरी-भरी हो जाएगी।"

राजा ने कहा, "पूरना ! तू भी घर लौट चल। तेरे बगैर उजड़ा हुआ घर फिर नहीं बसेगा।"

पूरन ने उत्तर में कहा, "राजा, हम घर नहीं लौट सकते। तुम्हारे लिए हम मर चुके हैं। और मेरे मुंह से जो बोल निकले हैं, वे भी अटल हैं। तुम्हारे घर बेटा होगा, लेकिन उसे भी तू घर में नहीं रख सकेगा। मां इच्छरां की तरह मां लूणा भी अपने बेटे के बगैर रोएगी, चीत्कार करेगी।"

कुछ समय बाद लूणा की कोख से रसालू का जन्म हुआ। ज्योतिषियों ने लगन देख कर सलाह दी कि इसे भी बारह बरस तक अपने मां-बाप से अलग रखा जाए। उसके ग्रह-नक्षत्र भी पूरन के ग्रह-नक्षत्रों जैसे थे। पंडितों ने कहा, "यह राजपुत्र बलवान सूरमा भी होगा और जोगी की तरह निर्लिप्त भी होगा।"

रसालू को तहखाने में डाल दिया गया। दासियां, बांदियां, और दाइयां नियुक्त कर दी गईं। बारह बरसों का खर्चा भी डलवा दिया गया। जिस दिन रसालू जन्मा, उसी दिन राजा के अस्तबल में एक घोड़ा जन्मा। उसका नाम रखा गया, फौलादी। उसके पालन-पोषण का इंतजाम भी रसालू के साथ किया गया।

रसालू दिनों-दिन बड़ा होने लगा। बारह बरस की.अवधि पूरी हुई तो वह तहखाने से बाहर निकला। वह जितना रूपवान था, उतना ही स्वस्थ भी था। उस्तादों ने उसे राज-काज से संबंधित सभी विद्या सिखाईं। घुड़सवारी, तीरंदाजी, तलवारबाजी और नेजेबाजी में वह पूरी तरह से निपुण था। घर से बाहर वह शिकार खेलता था और घर के अंदर शतरंज खेलता था।

जब वह जवान हुआ तो खेल ही खेल में गुलेल चलाने लगा। गांव की औरतें कुएं पर पानी भरने जातीं तो रसालू गुलेल मार कर घड़ों में छेद कर देता था। आंख झपकते ही एक

ही घड़े में दस-बारह छेद कर डालता था। जगह-जगह पानी की धारें बहने लगतीं। सपने जैसा नजारा दिखाई देता था। लेकिन रसालू के इस मनोरंजन से गांव का बड़ा नुकसान होता था। औरतों ने लूणा के महल में जाकर फरियाद की। लूणा अपने लाड़ले बेटे को मना न कर सकी। उसने लोगों को घड़े की बजाय गागरें ले दीं। लेकिन रसालू मां से भी ज्यादा तेज था। अब उसने गुलेल की बजाय हाथ में तीर-कमान पकड़ लिया। तीर मार कर गागरों में छेद कर देता। प्रजा बहुत दुखी हुई। अब फरियाद राजा तक जा पहुंची। राजा अपने इकलौते बेटे को रोक न सका। लेकिन प्रजा का दुख भी उससे देखा न गया। उसने अपने बेटे की शक्ल से मिलता-जुलता एक बुत बनवाया और उसका मुंह काला करके राजमहल के बाहर रखवा दिया। रसालू शिकार खेल कर लौटा तो उसने राजमहल के फाटक पर अपना बुत देखा। काला मुंह, नीले पैर। वह राजा के क्रोध को समझ गया। उसे पता चल गया कि महलों में मेरा दाना-पानी खत्म हो चुका है। उसने अपना देश छोड़ देने का फैसला कर लिया।

राजकुमार के निर्वासन की खबर सारे शहर में फैल गई। हिम्मती लड़के रसालू के साथ चल पड़े। सब ने पक्की ठान ली कि अपने देश से बाहर जाकर सिर्फ अपनी हिम्मत के बलबूते पर कुछ कर दिखाएंगे। इन लड़कों की माताएं फिर लूणा के महल मे पहुंचीं। वहां जाकर अर्ज की कि अपने बेटे को राको। लेकिन तीर, कमान से छूट चुका था। रसालू और उसके साथी शहर से बहुत दूर जा चुके थे। लूणा महल की अटारी पर चढ़ कर अपने निर्वासित बेटे को देखने लगी। लेकिन धूल-मिट्टी के बादल के सिवा कुछ दिखाई न दिया।

लूणा ने विलाप करते हुए आवाजें लगाईं :

"वे तूं चलिऊं देस बगाने पुत्त रसालूआ,
वे तूं मुड़ आ किसे वहाने पुत्त रसालूआ !
कलगी तेरी मिट्टी च रुल गई,
तेरे नक्श ना जाण-पछाणे, वे पुत्त रसालूआ !
तिक्खी छुरी कलेजे घाणी
जा बैठी दिल दे खाने, वे पुत्त रसालूआ !
पिच्छे तां छड्ड गिओं, बलदियां लाटां,
वे तूं बन्न गियों अग्ग दे गाने, वे पुत्त रसालूआ !"[1]

रसालू ने शहर की ओर ऐसी पीठ की कि दोबारा पीछे मुड़ कर न देखा। सियालकोट से चल कर वह गुजरात पहुंचा जहां एक गूजर राजा का राज्य था। राजा ने शहर से बाहर आकर रसालू की अगवानी की और पूछा :

---

1. बेटा रसालू, तू बेगाने देश चला गया है, बेटा रसालू किसी बहाने से लौट आ। तेरी कलगी मिट्टी में बर्बाद हो गई है, तेरी सूरत पहचानी नहीं जाती। तेज छुरी सीधी जाकर कलेजे में लग गई है। अपने पीछे तू सुलगती हुई लपटें छोड़ गया है, आग के गाने बांध गया है।

"किस राजे दा पुत्तर हैं,
ते की है तेरा नाम ?
केहड़ा तेरा देस सोणियां
केहड़ा नगर ग्राम ?"[1]

रसालू ने जबाब दिया :

"मैं राजे सलवान दा पुत्तर
मेरा नाम रसाल ।
मेरा तां हुण देस ना कोई
पियो दा देस सियाल ।"[2]

गूजर राजा पहचान गया कि रसालू बड़ा मनमाना लड़का है। उसने कहा, "अगर अपना जोर ही आजमाना है तो जेहलम की तरफ जाओ। उस देश के चौथाई हिस्से पर तुम लोगों का हक है। तुम्हारा पिता बहुत दिनों तक निस्संतान रहा और उसने कभी अपना हक जतलाया ही नहीं।"

फौलादी घोड़े की पीठ पर बैठा रसालू आगे चला गया। उसने हाथ में दो मन का कमान संभाल लिया। इसमें से एक ही समय में तीन तीर चलाए जा सकते थे जो अपना निशाना ढूंढ़ कर लौट आते थे। रसालू ने जेहलम का किला पलों-घड़ियों में ही जीत लिया। अपने साथियों में से ही एक को वहां का राजा बना कर वह खुद आगे चला गया। बाकी साथी उसके साथ चलने लगे तो उसने कहा, "तुम लोग यहीं रहो। तुम लोगों के बगैर यह अकेला राज्य कैसे चलाएगा ? अगला सफर मैं अकेले ही तय करूंगा। मेरे साथ सिर्फ दो साथी होंगे, एक मेरा घोड़ा फौलादी और दूसरा मेरा तोता शादी।"

रसालू जीतता हुआ आगे बढ़ता चला गया। इधर राजा सलवान बूढ़ा होता जा रहा था। पता नहीं कब काया में से पंछी उड़ जाए और सिंहासन खाली रह जाए ! राजा ने अपने बेटे के पीछे-पीछे अपने संदेश भेजे। संदेशवाहकों को पता चलता कि आज रसालू फलां जगह पर है, जब वे वहां पहुंचते तो रसालू वहां से भी आगे किसी दूसरी जगह पहुंचा होता। पिता का संदेश बेटे तक न पहुंच पाता। दूत वापिस लौट आते। फिर लूणा ने संदेश भेजा, लेकिन वह भी रसालू तक न पहुंचा। आखिरकार मां इच्छरां ने अपने बेटे पूरन का नाम ध्यान कर रसालू को संदेश भेजा। परमात्मा की कृपा ऐसी हुई कि यह संदेश रसालू तक पहुंच गया और वह अपने घर की ओर लौट पड़ा। राजा सलवान ने अपने बेटे की मंगनी छोटी उम्र में ही अपने वजीर मोतीराम की बेटी के साथ कर दी थी। रसालू अपने घर वापिस लौट रहा था। शहर से बाहर कुएं पर पानी भरती नवयुवतियां आपस में हंस-

---

1. तू किस राजा का बेटा है तेरा नाम क्या है ? ओ खूबसूरत नौजवान, तेरा देश कौन सा है ? किस नगर-ग्राम से आये हो ?
2. मैं राजा सलवान का बेटा हूं। मेरा अब कोई देश नहीं है। पिता के देश का नाम सियाल है।

खेल रही थीं। उन्होंने रसालू को मस्त मनमौजियों की तरह गुजरते देखा, तो एक लड़की ने बोली मारी :

"वे घोड़ी दे असवारा ।
फंडें तां तेरे उड़न हवा विच
सांभ लै कुड़ी दे वांग ।
हाय वे घोड़ी दे असवारा ।
जे फंडियां तो तैनूं फड़िया किसे ने
पुटन्न नहीं देनी लांघ ।"[1]

रसालू ने फौरन जवाब दिया :

"जां तां अपनी मोड़ लै बोली
नहीं तां होण ना देवां तेरा काज ।
टुट्ट जाए तेरा चूड़ा-बीड़ा
धरिया रह जाए दाज ।"[2]

लड़की को एक तो अपने जोबन का मान था, दूसरे वह वजीर की बेटी थी। वह भला अपनी बोली वापिस कैसे लेती ? उसने बड़े गुमान से रसालू की ओर देखा और फिर अपनी पीठ मोड़ ली।

घर पहुंचने ही रसालू ने अपने मां-बाप से कहा, "जिस काम से मुझे बुलाया है वह काम जल्दी से निपटा डालो। मुझसे ज्यादा देर तुम लोगों की चहारदीवारी में कैद नहीं रहा जाएगा।" मां-बाप ने सोचा, लड़के की शादी कर दो, घर में बीवी आएगी तो मन रम जाएगा। अगले ही दिन राजा बारात सजा कर मोतीराम के घर जा पहुंचा। लड़की ने सोलह सिंगार किए और लावों पर आ बैठी। ब्राह्मणों ने दोनों के दुपट्टों की गांठ लगा दी। चार फेरे हो गए। अभी तीन बाकी थे। इस बार दुल्हिन पीछे ओर दुल्हे को आगे होना था। अपनी दुल्हिन के आगे जाने से पहले रसालू ने गर्दन घुमा कर दुल्हिन को देखा। आंखें चार हुईं और दोनों ने एक-दूसरे को पहचान लिया। पलक झपकते ही रसालू ने म्यान में से तलवार निकाली और शादी की गांठ काट कर दूर फेंक दी। बिजली की सी तेजी से वह आंगन में से भाग कर बाहर खड़े फौलादी पर जा चढ़ा। बराती-घराती देखते रह गए। लेकिन रसालू शहर से दूर जा चुका था। बाप ने आवाजें दीं, "माथे पर तिलक तो लगवा जा ! आज से यहां का राजा तू है।"

रसालू चलते-चलते एक सघन जंगल में पहुंचा जहां बेहद गरमी थी, लेकिन बड़ी तीखी महक फैली थी। कुछ आगे पहुंचा तो देखा, चंदन का एक पेड़ जल रहा था। कुछ

1. अरे घोड़ी के सवार ! तेरे बाल हवा में उड़े जा रहे हैं। इन्हें लड़कियों की तरह संवार ले। अरे घोड़ी के सवार, अगर किसी ने तुझे बालों से पकड़ लिया तो एक कदम भी आगे नहीं जाने देगी।
2. या तो अपनी बोली वापिस ले लो, वरना मैं तुम्हारी शादी नहीं होने दूंगा। तेरा चूड़ा भी टूट जाएगा और दहेज धरा रह जाएगा।

देर बाद पेड़ में से जलते पंखों वाला एक हंस निकला और राजा के कदमों में आ गिरा। उसे देख कर उस का दिल बहुत दुखी हुआ। उसने हंस से पूछा, "पेड़ को आग लगते ही तू उड़ क्यों न गया ?" हंस ने कहा, "सारी उमर जिस पेड़ का मेवा खाया, ठंडी छांह का आनंद लिया, उसके सिर पर मुसीबत आ गई तो मैं कैसे भाग जाऊं ?" रसालू ने खुद उद्यम किया, नदी का प्रवाह पेड़ की तरफ मोड़ा और परमात्मा के आगे प्रार्थना की कि इस पेड़ का दुख दूर करो। आग बुझ गई तो हंस फिर पेड़ पर जा बैठा। हंस और चंदन के पेड़ का प्यार देख कर राजा का दिल भर आया। लेकिन वह खुद तो सारा प्यार-मुहब्बत तोड़ आया था। रसालू आगे चल पड़ा तो हंस ने कहा :

"कलमुकल्ला भोरे पालियों, कल्ले तेरे राह
कलमुकल्ले जंगल थानी, कल्ला-कल्ला जा।"[1]

रसालू चलता गया। जंगल खत्म होने में नहीं आता था। अगली सुबह रसालू को रास्ते में एक सांप मिला। आंधी चलने से जो रेत उड़ी थी, उससे उसकी आखें अंधी हो गईं थीं। सांप ने घोड़े की पदचाप सुन कर अंदाजा लगाया कि कोई इंसान इस तरफ से गुजर रहा है। उसने विनती की :

"ऐनी राहीं लंघार्दया, गल्ल साडी सुन जा,
जे तूं मेहरां वालड़ा साडी अक्ख कंकर कड्ढ जा
धरमियां धरम कमा।"[2]

सांप तो मनुष्य जाति का बैरी होता है। लेकिन घर से इतनी दूर आकर वह बैर-विरोध की बातें भूल चुका था। राजा ने अपने हाथों से वासकनाग की आंखों में से कंकर निकाले। नाग की आंखें ठीक हो गईं। राजा आगे बढ़ने लगा तो नाग फन फैला कर उसके रास्ते में खड़ा हो गया। राजा ने पूछा, "यह क्या ? उपकार का यह बदला ?" नाग ने सिर झुका लिया और कहा—"मेरी तो इतनी ही अर्ज है कि आज की रात मेरे घर ठहर कर जाओ।" रसालू ने विनती मान ली। उसकी गुफा में जाकर उस वीर-बहादुर ने सारी रात नाग के साथ एक ही पलंग पर सोकर बिताई। अगली सुबह सांप फिर किसी आदमी को डसने के लिए घास में गायब हो गया और रसालू अपने रास्ते पर चल दिया।

जंगल पार करके रसालू नीले शहर में पहुंचा। शहर के बाहर एक बुढ़िया बैठी थी। वह कभी हंस रही थी, कभी रो रही थी। रसालू ने उसका दुख पूछा, लेकिन बुढ़िया पहले की तरह ही हंसती-रोती रही, उसने कोई बात न बताई। रसालू ने भी उसका पीछा न छोड़ा। आखिरकार माई ने बताया, "इस शहर पर एक दैत्य का कब्जा है जो हर रोज एक आदमी का भक्षण करता है। कुछ लोग तो शहर छोड़ कर भाग गए हैं, कुछ को दैत्य ने खा

---

1. तू तहखाने में अकेला रह कर पला है, तेरी राहें अकेली हैं, अकेले जंगल में तू अकेला ही जा।
2. इस रास्ते से गुजरने वाले, मेरी बात सुनता जा। अगर तू कृपालु है तो मेरी आंख का कंकर निकालता जा। ऐ धरमी, धरम कमा ले।

लिया है, बाकी लोग अपनी मौत का इंतजार कर रहे हैं। मेरे सात बेटे थे, छह दैत्य ने खा लिए। आज सातवें की बारी है। यह सोच कर हंसती हूं कि मैं बच गई। यह सोच कर रोती हूं कि अपने सामने सात बेटों की बलि चढ़वा बैठी हूं।'' राजा ने पेड़ों, पंछियों और नागों का भला किया था। आज इंसान पर उपकार करने का मौका था। इस मौके पर जान का खतरा था। राजा ने निश्चय कर लिया कि माई के बेटे की जगह मैं दैत्य का भोजन बनूंगा।

रसालू अपने घोड़े पर चढ़ कर फिर जंगल की ओर चल पड़ा। शहर के लोग दैत्य के भक्षण के लिए एक गाड़ी रोटियों की और एक सांड भी भेजते थे। वे लोग भी राजा के साथ थे। दैत्य ने जब एक घुड़सवार को अपनी ओर आते देखा तो खुश हुआ कि और चीजों के साथ एक घोड़ा भी खाने को मिलेगा। उसने सबसे पहले घोड़े पर ही हाथ डाला, लेकिन रसालू ने पलक झपकते ही तलवार से उसकी बांह काट डाली। दैत्य चीत्कार करता हुआ उठ कर अपने घर की तरफ भागा। लेकिन उसके बचाव का कोई रास्ता नहीं था। दैत्य पेड़ों के पीछे छिप जाता, लेकिन रसालू के तीर पेड़ को बींध कर उस तक पहुंच जाते थे। उसने अपने बच्चों को राजा के मुकाबले के लिए आगे भेजा, लेकिन कुछ को राजा की तलवार ने काट डाला, कुछ को उसके रस्से ने बांध लिया। फिर दैत्य अपने घर में लोहे के सात कड़ाहों के पीछे जाकर छिप गया। बहादुर रसालू ने एक ही तीर से सातों कड़ाहों को छेद दिया और दैत्य को खत्म कर दिया। दैत्य के सारे परिवार को मारने से रसालू की धूम मच गई। सारे शहर के लोग अपने राजा के समेत रसालू के दर्शन करने आए। शहर वालों ने रसालू को रोकना चाहा, लेकिन उसके पैरों में चक्कर था जो उसे टिक कर बैठने नहीं देता था। वहां के राजा की बेटी कुमारी शौकंनी उसके रूप पर मोहित हो गई, लेकिन राजा का ध्यान उसकी तरफ जाता ही नहीं था। रसालू चलने लगा तो शौकंनी बहुत उदास होकर बोली :

''चन्नन चीरां, चिख बहां, फूक लगावां अग्ग,
वे सोहने परदेसियां, मैं मरां तेरे गल्ल लग्ग।''[1]

लेकिन इतना प्यार भी राजा को रोक न सका। वह भी एक तरह का जोग कमा रहा था। उसके मुंह से यही निकला—''तुम लोग बसते भले, जोगी रमते भले।''

यहां से चलता-चलता राजा अटक के पास नदी के किनारे सिरीकोट पहुंचा। यहां के राजा का नाम सिरकप्प था। इस राजा को भी एक अजब शौक था। वह आते-जाते राही परदेसियों से सिर की बाजी लगा कर चौपड़ खेलता था और उन्हें छल-फरेब से हरा कर उनके सिर काट लेता था। रात को जब रसालू इस शहर में पहुंचा तो उसके घोड़े का खुर एक अस्थिपंजर से टकराया। वह समझ गया, इस शहर के रास्तें में मुर्दे पड़े हैं, यहां खैर

1. चंदन की लकड़ी चिरवा कर मैं चिता में बैठ जाऊंगी, उसमें आग लगा लूंगी। ऐ सुंदर परदेसी, मैं तेरे गले से लग कर मर जाऊंगी।

नहीं। रसालू ने पहचान लिया कि यह तो जुएबाज सिरकप्प का शहर है। रसालू तो अपनी जान हथेली पर लिए घूमता था। उसने पक्का फैसला कर लिया कि वह सिरकप्प के साथ ही चौपड़ की बाजी खेलेगा। सुबह होते ही राजा रसालू राजमहल की ओर चल पड़ा। इतना सुंदर घुड़सवार राजा का शिकार बनेगा, यह सोच कर शहर के लाग उदास हो गए। एक सुंदर युवती ने घोड़े की लगाम पकड़ ली और कहा :

"नीले घोड़े वालिया राजा, नीवें नेज़े आ,
अग्गे राजा सिरकप्प है, सिर लैसी ओह लाह,
भला चाहें जे आपना, तां पिच्छे मुड़ जा।"[1]

लेकिन राजा ने घोड़े को ऐड़ लगाई और आगे बढ़ गया। उस शहर के लोगों को भी राजा रसालू का रूप देख कर बहुत तरस आया। हर किसी ने अपनी अक्ल के मुताबिक राजा को बाजी जीतने के गुर बताए। उसकी खैरियत की दुआ मांगते हुए किसी ने मंत्र पढ़े, प्रार्थनाएं कीं। एक आदमी ने प्यार से पाली अपनी बिल्ली राजा की जेब में रख दी और कहा :

"ठहर वे राजा भोलिया, साडी ऐनी गल्ल सुन जा,
जदों डाढ़ी भीड़ा आ बने, तेरी पेश ना जावे का,
दाहिना दस्त उठाई के अपनी जेब च पा।"[2]

रसालू ने राजा के महल पर जाकर आवाज दी कि आज तुम्हारे साथ कोई चौपड़ खेलने आया है। महल की ड्योढ़ी पर चौदह नगाड़े पड़े थे। राजा को चुनौती देने वाले आदमी के लिए यह जरूरी था कि वह नगाड़े बजा कर राजा को खबरदार करे और नगाड़े कुछ इस तरह से बने थे कि एक बार बजाने पर बहुत देर तक गूंजते रहते थे और सुनने वाला चकरा जाता था। चकराया हुआ आदमी भला बाजी कैसे जीतता ? ड्योढ़ीदार ने रसालू को नगाड़ों पर चोट करने के लिए कहा। राजा एक के बाद दूसरे नगाड़े पर इतनी जोरदार चोट करने लगा कि नगाड़े फट गए और वह गूंज न सके।

ड्योढ़ी से आगे सिरकप्प की सत्तर बेटियों का झूला था, जो आने वाले के मन को एकाग्र नहीं होने देती थीं। उन्होंने रसालू से कहा, "हमें झुला कर जाओ।" राजा ने कहा, "मेरे पास इतना वक्त नहीं। सबको एक साथ झुलाऊंगा।" सत्तर लड़कियां एक साथ झूले पर सवार हो गईं। रसालू ने जोर से झुला कर झूला आसमान में चढ़ा दिया। उतरते हुए झूले पर तलवार का ऐसा भरपूर वार किया कि झूला बीच में से टूट गया और लड़कियां जख्मी होकर धरती पर गिर पड़ीं।

रसालू दीवानखाने की ओर बढ़ा, लेकिन उससे भी पहले फटे नगाड़ों और जख्मी

---

1. नीले घोड़े वाले राजा, नजदीक आ। आगे राजा सिरकप्प है, वह तेरा सिर उतार लेगा। अगर अपना भला चाहता है तो पीछे लौट जा।
2. ऐ भोले राजा, ठहर जा, हमारी इतनी सी बात सुनता जा। जब तुझ पर बहुत मुसीबत आ पड़े और तुम्हारी कुछ भी पेश न जाए तो दाहिना हाथ उठा कर अपनी जेब में डाल लेना।

बेटियों की खबर राजा तक पहुंच चुकी थी। अब रसालू नहीं, बल्कि सिरकप्प घबरा गया था। उसकी एकाग्रता खंडित हो गई। बाजी शुरू हुई तो सिरकप्प ने वचन उचारा :

"दीवे दे निम्मे चानण चौपड़
राजे खेड्डन दो
आ नी सईये होणिये, तू मेरे वल्ल हो
हुकम जो राजे सिरकप्प दा, नरदां मन्नन सो।"[1]

सिरकप्प पांसे फेंकने ही वाला था कि राजा रसालू ने कहा, "राजा तेरी तो शुरुआत ही बुरे शगुनों से हुई है। सारे काम परमात्मा के नाम से शुरू होने चाहिए :

दीवे दे निमे चानण चौपड़
राजे खेडन दो
आ नी माता होणियें, तू मेरे वल्ल हो
हुकम जो सच्चे साहब दा, नरदां मन्नन सो।

चौपड़ खेलते वक्त राजा सिरकप्प ने अपने दायें-बायें अपनी रानी और बेटी दोनों को बैठा लिया, जो अपने रूप के जोर से चौपड़ खेलने वाले का ध्यान अपनी तरफ खींच लेती थीं। खिलाड़ी रानी की तरफ देखता तो बेटी गोटियां हिला देती, बेटी की तरफ देखता तो रानी गोटियां हिला देती। लेकिन रसालू के पास तो जोगी जैसी एकाग्रता थी, रूप में वह रानी और राजकुमारी से भी दूना-सवाया था। बाजी शुरू हुई तो कोई चरित्तर काम न आया। रसालू तो जैसे अचल समाधि बैठा में था। राजा सिरकप्प पहली बाजी हार गया।

दूसरी बाजी शुरू हुई। रानी और राजकुमारी तो अपनी हार मान कर वहां से उठ खड़ी हुईं। उनकी जगह बुझारते डालने वाले आ बैठे। रसालू जैसे ही कोई चाल सोचता, बुझारतिआ कोई न कोई मुश्किल बुझारत (पहेली) डाल देता। पहली बुझारत थी :

"अठ्ठ पत्तन, नौ बेड़ियां, चौदह घुम्यन घेर,
जे तूं राजा जती सती तां पानी कितने सेर ?"

रसालू ने एक ही वक्त चाल भी चली और बुझारत का जवाब भी दिया :

"अठ्ठ पत्तन नौ बेड़ियां, चौदह घुम्यन घेर
अंबर तारे गिन दस्सी, मैं दस्सां पानी उतने सेर
जिन्नी जंगल लकड़ी, पानी उतने सेर।"[2]

एक के बाद दूसरी बुझारत पेश होती, रसाालू उससे भी मुश्किल जवाब देता। बुझारतों को बेकार जाते देख कर बुझारतियों को अपने सिर की फिक्र हो गई। उन्होंने वहां से खिसकने में ही अपनी खैरियत समझी। सिरकप्प दूसरी बाजी भी हार गया।

---

1. दीये की मद्धिम रोशनी में दो राजे चौपड़ खेलने लगे हैं। आ सखी होणी, तू मेरा साथ दे, राजा सिरकप्प का हुक्म पांसे भी मानते हैं।
2. आठ घाट, नौ बेड़ियां, चौदह भंवर हैं। तुम पहले आकाश के तारे गिन कर बताओ, उतने ही सेर पानी नदी में होगा। जंगल में जितनी लकड़ी है उतने ही सेर पानी नदी में है।

अब आखिरी बाजी थी। सिरकप्प के पास अभी भी एक छल बाकी था। बाजी शुरू हुई तो सिरकप्प ने अपनी सिखाई हुई दो चुहियां निकाल लीं जो चौपड़ पर से गुजर कर गोटियां हिला जाती थीं। रसालू के दांव उल्टे पड़ रहे थे। लेकिन पता नहीं किस शुभ घड़ी में उसे किसी प्रीत वाले आदमी के बोल याद आ गए :

"ठहर वे राजा भोलिया, साडी ऐनी गल्ल सुन जा
जदों डाढ़ी भीड़ा आ बने, तेरी पेश ना जावे का
दाहिना दस्त उठाई के अपनी जेब च पा।"

रसालू ने अपना दायां हाथ जेब में डाला। जेब में से बिल्ली बाहर निकल आई। सिरकप्प की चुहिएं बिल में जा घुसीं। बाजी फिर रसालू के पक्ष में ढलने लगी। सिरकप्प घबरा कर बोला :

"ढल वे पासे ढालवें, इत्थे बसंता लोक,
सिरां धड़ां दीयां बाजीआं, जेहड़ी सिरकप्प करे सो होग।"

रसालू ने पांसा फेंका और बोला :

"ढल वे पासे ढालवें, इत्थे बसंता लोक,
सिरां धड़ां दीयां बाजीआं, जेहड़ी रब्ब करे सो होग।"[1]

राजा सिरकप्प सिर की बाजी भी हार गया। ऐन उसी वक्त एक आदमी ने आकर खबर दी कि तुम्हारे घर एक बेटी ने जन्म लिया है। राजा ने हुक्म दिया कि इस कुलच्छनी को फौरन मार दिया जाए। लेकिन रसालू ने कहा, "जो राजा अपना सिर हार चुका है, वह दूसरे के सिर के बारे में कैसे हुक्म दे सकता है ? इस राजकुमारी को मैं अपने साथ ले जाऊंगा।" रसालू अभी भी शादी के बंधन में नहीं बंधना चाहता था। आज पैदा हुई लड़की के जवान होने तक वह आजाद जिंदगी बिता सकता था। रसालू ने सिरकप्प की जान बख्श दी, लेकिन शर्त यह थी कि आगे से वह जुआ नहीं खेलेगा। महल में इतनी देर बैठ कर रसालू को लगा जैसे उसका दम घुट रहा है। वह फिर खुली हवा में आकर खड़ा हो गया। वह बंदीगृह के पास से गुजर रहा था, तो कैदियों ने शोर मचाया :

"होर राजे मुर्गाबियां, तू राजा शाहबाज,
बंदीवानां दे बंद खलास कर, तेरी उम्र दराज।"[2]

राजा रसालू ने अपने हाथों से बंदीगृह के दरवाजे खोल दिए। कैदी राजा रसालू को असीसें देते हुए बाहर निकल आए। राजा वहां से उतरकर खेड़ी-मूरती की पहाड़ियों में आ गया। यहां उसने एक महल बनवाया। महल के सामने आम का एक पौधा लगा दिया और कहा, "जब आम में बौर आएगा उस वक्त राजकुमारी कोकलां भरपूर जवान होगी। तब मैं उसके साथ शादी रचाऊंगा।"

---

1. ऐ पांसे लुढ़क, यहां लोग बसते रहें। सिर और धड़ की बाजियां लगी हैं। जो परमात्मा चाहेगा वही होगा।
2. दूसरे राजा तो मुर्गाबियां हैं। तू शहबाज है। कैदियों को बंधनों से मुक्ति दिला, तेरी उम्र लंबी हो।

रसालू कभी भी टिक कर घर में न बैठ सका। उसे तो शिकार से ही फुर्सत नहीं थी। जब भी फुर्सत मिलती, कोई भारी जोखिम का काम शुरू कर देता। आम में कब बौर पड़ा, कोकलां कब जवान हुई, उसने कभी ध्यान न दिया। राजा जती-सती था। उसके महल में कोकलां के सिवा और कोई रानी दाखिल न हुई। बेचारी कोकलां तो अपनी उम्र के किसी मरद या औरत के साथ बात करने को तरस गई। राजा की नस-नस में शक्ति की बेपनाह बाढ़ आई हुई थी। अपनी शक्ति के सामने उसे कोकलां का जोबन भी बचकाना मालूम होता था। बात यह हुई कि राजा और रानी के बीच प्रीत न पैदा हो सकी। न वे कभी मिल कर बैठे, न एक-दूसरे की बातें सुनी-सुनाईं। दोनों एक-दूसरे के लिए परदेसी बने रहे।

एक दिन राजा रसालू शिकार खेलने गया हुआ था। उसके पीछे एक दूसरा राजा शिकार खेलता हुआ इस महल की तरफ आ निकला। कोकलां छत पर चढ़ कर अकेली आसपास की बाग-बहार देख रही थी। नीचे एक अजनबी को देख कर बोली :

''महलां हेठ फिरंदिया, साध फिरें के चोर ?''[1]

नीचे से राजा बोला :

''चोरां मैले कपड़े, साधां नवें नकोर।''[2]

नीचे खड़े राजा का नाम होडी था। उसने कोकलां का एकदम नया ताजा जोबन देखा तो मोहित हो गया। उसके मुंह से अनायास ही ये शब्द निकले :

''अल्लीयां दाखां पक्कीयां, चो चो पैन अनार।''[3]

कोकलां अभी भी अपने सत पर कायम थी। उसने कहा—''ऐसा कोई न जम्मिया जो आवे राजे दे दरबार।''[4]

होडी ने महल के भीतर जाना चाहा। फाटक पर पहाड़ जितना भारी पत्थर पड़ा था, जिसे सरका कर रसालू भीतर जाया करता था। होडी ने बड़ा जोर लगाया, लेकिन पत्थर अपनी जगह से हिला तक नहीं। होडी चाहता था कि पंछी बन कर कोकलां के पास पहुंच जाए। लेकिन यह उसके वश की बात नहीं थी। उसने कोकलां से कहा, ''नीचे कमंद फेंक दे।'' आखिर कोकलां पसीज गई। वह खुद भी तो अकेली रह कर किसी से बातचीत करने के लिए तरस गई थी। उसने कमंद फेंकी तो राजा होडी ऊपर चढ़ आया। इसके बाद बेचारी कोकलां अपना सत कायम न रख सकी। रसालू जंगलों में शिकार खेलता रहा और कोकलां रंगमहल में रंगरेलियां मनाती रही।

अगले दिन होडी चल दिया तो कोकलां रो पड़ी। होडी ने उसके आंसू पोंछे तो कोकलां का काजल उसके हाथ में लग गया। राजा ने सौगंध खाई, ''मैं जल्दी ही लौट आऊंगा। जितनी देर तुमसे दूर रहूंगा, तेरा काजल हाथ से अलग नहीं होने दूंगा। न इस हाथ

---

1. ऐ महल के नीचे घूमने वाले, तू साधु है या चोर ?
2. चोरों के कपड़े मैले होते हैं, साधुओं के एकदम नये होते हैं।
3. कच्ची दाखें पक गई हैं, अनार रस से भर गए हैं।
4. ऐसा कोई नहीं पैदा हुआ जो राजा के दरबार में आए।

से खाऊंगा, न पीऊंगा, न इसे धोऊंगा, न इस हाथ से कोई काम-काज करूंगा।"

राजा रसालू वापिस लौटा तो देखा कि रानी की चाल-ढाल ही कुछ और तरह की थी। बालों की मेढियां खुली हुईं, टूटा हार, ढीली सेज। राजा बोला :

"किन्न मेरा खूहा गेड़िया. रानी किसने भन्नी निसार
घड़ियों पानी किस ल्या, किस सुट्टे खंघार
कौन महलां विच दौड़िया, महली पई धसकार
सेज मेरी कौन लेटिया, ढिल्ली पई निवार ?"[1]

रानी एकाध दिन में ही भरपूर सयानी हो चुकी थी। उसने कमाल की चतुराई से जवाब दिया :

"मैंने ही कुआं चलाया, मैंने ही निसार तोड़ी
घड़े में से पानी मैंने ही लिया, मैंने ही थूक डाले
मैना ने मेढियां खोली हैं, तोते ने हार तोड़ा है
मैं बावली होकर भागी थी, जिससे महल का फर्श धंस गया।
शूल की सताई मैं ही सेज पर लेटी थी, जिससे निवार ढीली पड़ गई।"

राजा उस वक्त तो चुप हो गया, लेकिन आज उसके मन में संदेह का अंकुर उग आया। उसे आज अपनी ही रानी, अपने कपड़ों से बाहर निकलती मालूम हो रही थी। उसके जोबन में कोई अलौकिक आग सुलग उठी थी। अगली सुबह वह फिर तड़के ही शिकार को निकल गया। लेकिन अब उसकी एकाग्रता खंडित हो गई थी, निशाना सीधा नहीं पड़ता था। उसे लगता, जैसे उसके जूते में कोई कंकर छिपा बैठा है, कोई अदृश्य बैरी उसके भीतर आकर बैठ गया है। वह दोपहर में ही घर की तरफ लौट पड़ा। तीसरे पहर महल के नजदीक पहुंचा तो देखा कि एक आदमी कमंद से नीचे उतर रहा है और कोकलां ऊपर खड़ी होकर उसे विदाई दे रही है। राजा आपे से बाहर हो गया। लेकिन उसने जी कड़ा करके उसे ललकारा। अब होडी और रसालू एक-दूसरे के आमने-सामने थे। रसालू ने कहा : "आज पहल तेरी है। वार कर ले।" होडी ने तीर छोड़ा, लेकिन अभी-अभी सेज भोग कर आए होडी के तीर में कोई ताकत नहीं थी। रसालू ने उसे झाड़ कर दूर फेंका। रसालू ने कहा, "थोड़ा दम ले ले, एक बारी और ले ले।" होडी ने एक तीर और चलाया, रसालू ने उसे भी ढाल पर बचा लिया। रसालू की एकाग्रता पूरी तरह से कायम थी। उसने एक ही भरपूर वार किया और होडी दो टुकड़े होकर गिर पड़ा।

कोकलां ऊपर खड़ी देख रही थी। उसे पता लग गया कि अब मेरी खैर नहीं। उसने रंगमहल के बुर्ज से छलांग लगा दी। रसालू ने अपने हाथों से होडी और कोकलां की लाशें अपने घोड़े पर बांध दीं और घोड़े को जंगल की तरफ भगा दिया। विदाई के वक्त बस

---

1. ऐ रानी मेरा कुआं किसने चलाया, किसने निसार तोड़ी ? घड़े में से पानी किसने भरा ? किसने उसमें थूक डाली ? महल में कौन दौड़ा था जिससे महल का फर्श धंस गया ? मेरी सेज पर कौन लेटा था, निवार ढीली पड़ गई है ?

इतना ही कहा : "यार फौलादी, तेरा-मेरा इतना ही साथ था। आज से मुझे अपना जीवन बदलना पड़ेगा।"

अब उसे अपने मां-बाप की याद आई। साथ ही उसकी भी, जिसे वह फेरों के वक्त छोड़ आया था। उसे लगा, जैसे सियालकोट उसे आवाजें दे रहा हो। उसने सूने महल के बड़े दरवाजे के सामने पड़ा पहाड़ जैसा बड़ा पत्थर सरका कर दूर हटा दिया। दरवाजा खोल दिया। लेकिन खुद उन्हीं कदमों से पीछे मुड़ गया, अपने शहर की तरफ।

दुल्ला भट्टी

बलवंत गार्गी

अकबर बादशाह का जमाना था। लाहौर शहर के नजदीक सांदलबार के इलाके के मुसलमान भट्टी राजपूतों ने बादशाह को खिराज देने से इंकार कर दिया था। आखिर तंग आकर मुगल फौजें चढ़ आईं और सरदार फरीद और उसके अब्बा को पकड़ कर ले गईं। मुश्कें कस कर उन्हें अकबर के सामने पेश किया गया।

बादशाह ने सवाल पूछा तो फरीद ने अकड़ कर जवाब दिया और मुगलों को गालियां निकालीं। बादशाह आग-बबूला हो गया। हुक्म दिया, ''जल्लादो ! इन बागियों के सिर काट कर शहर के बड़े दरवाजे पर टांग दो। इनकी चमड़ी उधेड़ कर इनके जिस्मों में भूसा भर दो।''

बाप-बेटा दोनों मारे गए। इस वक्त फरीद की बीवी को जिसका नाम लध्धी था, पांच महीने का गर्भ था। चार महीने बाद इतवार के दिन उसके बेटा पैदा हुआ तो उसका नाम दुल्ला रखा।

दुल्ले का चेहरा चमकदार था, माथा चौड़ा और आंखें नशीली थीं। दाई उसकी खूबसूरती देख कर सहम गई। उसका माथा देख कर बोली, ''यह शूरवीर बेटा अपने बाप का बदला लेगा।''

मां ने खुश होकर अपने बेटे के सिर पर से सोने की मोहरें वारीं, लेकिन साथ ही उसका दिल कांप उठा।

उसी दिन अकबर बादशाह के घर भी शहजादा पैदा हुआ, जिसका नाम उसने शेखू रखा और जो बाद में जहांगीर के नाम से मशहूर हुआ। बादशाह यह चाहता था कि उसका बेटा बड़ा होकर इंसाफ-पसंद और शूरवीर बने। नजूमियों ने नक्षत्रों का हिसाब लगा कर अर्ज किया, ''हुजूर ! पहले दान-पुण्य कीजिए और लोगों पर मेहर बरसाइए। फिर अपनी सल्तनत में एक ऐसी राजपूत मां तलाश कीजिए, जिसके यहां उसी दिन लड़का जन्मा हो। अगर शहजादा ऐसी मां का दूध पीकर बड़ा होगा तो बहादुर और विजेता बनेगा।''

बादशाह ने पड़ताल की। एक सांई बाबा ने दरबार में आकर बताया, ''शाह ! जिस फरीद भट्टी को तूने मारा था, उसकी बीवी लध्धी जवान और बलवान है। मर्दों जैसी दिलेर। उसके घर उसी इतवार को बेटा जन्मा, जिस दिन शहजादा पैदा हुआ।''

यह बात सुन कर बादशाह बहुत खुश हुआ। उसने इस बहादुर मां को अपने यहां लाने की बजाय शेखू को शाही अमले के साथ वहां भेज दिया। लध्धी को शहजादे को पालने का काम सौंपा गया और उसकी खातिर एक खूबसूरत महल बनवा दिया गया। शेखू और दुल्ला दोनों लड़के लध्धी का दूध पीकर भाइयों की तरह बड़े हुए। वे इकट्ठे कुश्ती लड़ते, तीर-कमान चलाते और घुड़सवारी करते थे। लेकिन इन खेलों में दुल्ला हमेशा शेखू से आगे निकल जाता था।

दोनों लड़के बारह बरस के हुए तो अकबर ने शेखू और दुल्ले को दरबार में बुलाया। हुक्म दिया गया कि बड़े मैदान में तंबू गाड़ा जाए और उन दोनों में तीरंदाजी का मुकाबला कराया जाए। सारा शहर इस मुकाबले को देखने के लिए उमड़ आया। उस्तादों ने दो रंगों के तीर दोनों को दिए ताकि कोई गलतफहमी पैदा न हो। शेखू के तीर इधर-उधर चले जाते थे, लेकिन दुल्ले के तीर निशाने पर गड़ जाते थे। फिर घुड़सवारी और तलवार चलाने का मुकाबला हुआ। दुल्ला हर बार जीत गया।

बादशाह के माथे पर उदासी की परछाईं फिर गई और दिल बैठ गया। उसने लध्धी को तलब किया और पूछा, "सच बता, क्या बात है ? मेरा बेटा क्यों हारता है ? तूने उसे दूध पिलाया था कि नहीं ? सच बता, बरना तेरी जान की खैर नहीं।"

लध्धी ने हाथ जोड़ कर अर्ज किया, "मैंने इसे बेटे की तरह पाला है। अपना दूध पिलाया है। मेरा कसूर बस इतना है कि दायां स्तन दुल्ले को पिलाती रही और बायां शहजादे को।"

बादशाह ने कुछ देर सोच कर कहा, "तेरा कसूर माफ करता हूं क्योंकि तूने शहजादे को पाला है, इसलिए मैं तुझे सोने की मोहरें इनाम में देता हूं। जा, जाकर दुल्ले की परवरिश कर। उसे अच्छी तरह पढ़ा। बड़ा हुआ तो मैं इसे दरबार में बुला कर जागीर बख्शूंगा।"

लध्धी गांव आकर दुल्ले को काजी के पास ले गई। उसे शीरनी का नजराना दिया और कहा कि वह दुल्ले को इस्लाम की तालीम दे और नेकी की राह पर चलने की दिशा दिखाए।

काजी की कट्टरपंथी पढ़ाई से तंग आकर एक दिन दुल्ले ने उसकी पिटाई की, इसके बाद वह बढ़ई के पास गया और उसे एक गुलेल तैयार करने के लिए कहा। दुल्ले के अंगों में फुर्ती और कसमसाती हुई बेपरवाही थी। उसने गांव के लड़कों को अपने साथ मिला लिया और उनका सरदार बन गया। औरतें जब कुएं पर पानी भरने जातीं तो वे सारे मिल कर उनके घड़े फोड़ देते। गांव में दुल्ला और उसके साथी खरमस्तियां करते, जिससे मुहल्ले की औरतें तंग आ गई थीं।

एक दिन नंदी मिरासिन ने बोली मारी, "अरे ! औरतों के घड़े क्यों तोड़ता फिरता है ? अगर इतना ही शूरवीर है तो बाप-दादे का बदला क्यों नहीं लेता ? जा, जाकर अकबर बादशाह को ललकार, जिसने तेरे बाप का सिर काट कर बड़े दरवाजे पर टांग दिया था।"

यह सुनते ही दुल्ले का कलेजा सुलग उठा। औरतों की दुनिया को छोड़ कर उसका

हाथ कटार पर गया और राठों का खून उसकी रगों में खौल उठा। वह सीधा अपनी मां के पास गया और कटार खींच कर बोला, "सच बता, मेरा बाप कैसे मरा था ? मुझे किसी ने बोली मारी है।"

मां डर गई। उसने बेटे की सुलगती आंखों में प्रतिशोध की ज्वाला देखी। दुल्ले ने फिर कहा, "अगर सच नहीं बताएगी तो मैं तेरा सिर काट दूंगा। बता, मेरा बाप कैसे मरा था ?"

विधवा मां ने रो-रोकर सारी बात बताई। अपने बेटे को कलेजे से लगा लिया और उसका माथा चूम कर बोली, "मैंने तुम्हें बड़ी मुसीबतें झेल कर पाला है। बादशाह से टक्कर मत लेना।"

दुल्ले के नथुने फड़क उठे और वह गुस्से में बोला, "मैं बुजदिल नहीं हूं। अपने बाप का बदला लूंगा। मुझे मेरे बाप की कोई निशानी दे।"

मां ने घर के पिछवाड़े की कोठरी का ताला खोला। इस कोठरी को उसने दुल्ले से छिपा कर रखा था। दुल्ला भीतर गया और उसने कोने में रखा नेज़ा उठा लिया। यह उसके बाप का नेज़ा था, आग की तरह सुलगता हुआ। मां समझ गई कि दुल्ला जरूर बदला लेगा। वह डर भी रही थी और अभिमान से उसका सिर भी ऊंचा था। कोठरी के भीतर तलवारें, खंजर और भाले रखे हुए थे। एक तरफ बड़ा सा नगाड़ा था। मां ने गाय का कच्चा दूध मंगवा कर नगाड़े पर छींटे मारे। दुल्ले ने नगाड़े पर चोट लगाई तो सारा घर गूंज उठा। यह आवाज गली और गांव के आंगनों में गूंज उठी और बारह कोस तक सुनाई दी।

नगाड़े की आवाज दुल्ले की बिफरी हुई मर्दानगी की आवाज थी, एक खूनी चुनौती जो अकबर के महल की दीवारों से जा टकराई। बादशाह के पास यह खबर पहुंची कि सांदलबार में सोलह बरसों के बाद यह नगाड़ा बजा है। किसकी जुर्रत थी कि मुगल सल्तनत के भीतर इस तरह की गुस्ताखी भरी आवाज उठाए !

दुल्ले ने पांच सौ तलवारें और नेज़े अपने साथियों में बांट दिए और पहला हल्ला अपने ननिहाल वालों पर बोला। उसे इस बात का गुस्सा था कि जब उसके बाप का सिर काटा गया तो उसके मामा लोग उसकी मां की मदद के लिए नहीं पहुंचे थे। वह यह कसम खाकर निकला कि लूट का कोई माल अपने पास नहीं रखेगा। वह ननिहाल वालों के पशु लूट लाया और उन्हें अपने गांव के नाइयों, मिरासियों और ब्राह्मणों में बांट दिए।

इसके बाद दुल्ला शेर हो गया। इलाके में से जो आततायी निकलता, दुल्ला उसका मुकाबला करके उसका माल और हथियार छीन लेता। उसकी बहादुरी और दरियादिली की शोहरत दूर-दूर तक फैल गई। इलाके भर की लड़कियां उस पर मोहित हो गईं।

दुल्ले के भीतर एक अजीब बेचैनी और गुस्से की आग सुलग रही थी। उसकी मारधाड़ का उद्देश्य चोरी करना नहीं था, बल्कि वह तो अपनी हेकड़ी मनवाने का एक बहाना था। बगावत का झंडा बुलंद करने का मकसद यह था कि मुगल दरबार मजबूर

होकर उसके साथ टक्कर ले।

उसे नजराना दिए बगैर उसके रास्ते में से कोई नहीं निकल सकता था। उसने अली सौदागर के पांच सौ घोड़े लूट लिए, मैदे साहूकार के दौलत से लदे खच्चर छीन लिए। अकबर के दरबार में हर रोज दुल्ले की नयी-नयी शिकायतें पहुंचने लगीं। तंग आकर अकबर ने एक खास जासूस को सारी असलियत का पता लगाने के लिए भेजा।

जासूस ज्योतिषी का रूप धारण करके दुल्ले के गांव में पहुंचा। दुल्ले ने भट्ट का आदर किया। लेकिन जब उसे पता लगा कि यह तो कोई जासूस है तो उसने उसकी दाढ़ी-मूंछें काट कर उसे वापिस भेज दिया। जासूस ने सारा ब्यौरा बादशाह को सुनाया। बादशाह को गुस्सा आया। दुल्ले की यह हिम्मत ! उसने हुक्म दिया कि जो भी दुल्ले को जिंदा या मुर्दा गिरफ्तार करके पेश करेगा उसे मोतियों-जवाहरातों का इनाम दिया जाएगा।

मिरजा निजामुद्दीन फौज लेकर दुल्ले के गांव की तरफ रवाना हुआ और उसके सिपाहियों ने सांदलबार की सीमा में आकर डेरे डाल लिए। गांव की गूजरी सुंदरी भी दूसरी नौजवान लड़कियों की तरह दुल्ले पर जान देती थी। वह बेहद होशियार, चालाक और सुंदर थी। दूध बेचने के बहाने वह फौज में गई और यह भेद लाई कि मिरजा निजामुद्दीन दुल्ले को दुरुस्त करने आया है।

जब यह खबर दुल्ले को मिली तो उसने अपने साथी इकट्ठे कर लिए और लड़ाई शुरू कर दी। उसकी मां ने मिन्नते कीं कि वह मुगल फौज के साथ टक्कर न ले। लेकिन स्वाभिमानी दुल्ला एक बार अकबर को दिखा देना चाहता था कि सांदलबार के भट्टी राजपूत किसी के आगे सिर झुकाने के लिए तैयार नहीं।

लड़ाई कई दिनों तक चलती रही और निजामुद्दीन की फौज के पैर उखड़ गए।

अकबर ने यह सुना तो उसने शेखू को भारी फौज देकर भेजा कि वह जाकर दुल्ले का सिर काट लाए।

शेखू की फौजें चढ़ आईं और सांदलबार में मुगलों के नगाड़े बजे। लध्धी का दिल कांप उठा। उसने शेखू को पाला था। एक तरफ उसका पेट से जन्मा दुल्ला था और दूसरी तरफ अपने दूध से पाला शेखू। दोनों में उसका स्वाभिमानी राजपूत दूध था, जो एक को दूसरे के सामने झुकने नहीं देता था।

लध्धी ने काले कपड़े पहन लिए और झोली फैला कर शेखू के पास गई। उसे देख कर शेखू का दिल पसीज गया। उसने मां से वायदा किया कि अगर दुल्ला अब भी बगावत छोड़ दे तो वह बादशाह से उसकी जान बख्शवा देगा।

मां ने दुल्ले से अमन की भीख मांगी। लेकिन अब दुल्ले और शेखू के बीच लहू की नहर थी, अपने बाप-दादा के लहू की। उसने मां की बात न मानी और शेखू को ललकारा, "अगर तू अकबर का बेटा है और मैं फरीद का बेटा हूं तो निकल आ मैदान में। अकेला आकर मुझसे जूझ।"

लड़ाई शुरू हुई। दुल्ले की तलवार में बिजली थी तो शेखू के भीतर भी मुगल खून

का जोश था। एकदम सारी उमर का आक्रोश उभर आया। पहले सैकड़ों बार वह खेल-खेल में दुल्ले से लड़ा था। दुल्ला उससे आगे रहता था। अब शेखू इस चीज को तोड़ने के लिए बढ़-बढ़ कर वार कर रहा था। तलवारें चमकती रहीं और खून झलकता रहा। लेकिन शेखू को हारते देख कर मिरजा निजामुद्दीन और उसके सिपाही दुल्ले पर टूट पड़े। आखिरी वार शेखू ने किया। उसका खंजर दुल्ले के सीने में उतर गया और लहू की धार बह निकाली।

सांदलबार का बागी और स्वाभिमानी दुल्ला सदा-सदा के लिए मौत की नींद सो गया।

बेशक दुल्ला लड़ाई में हार गया था, लेकिन वह लोगों के दिलों में हमेशा के लिए जिंदा हो गया, उसके स्वाभिमान के गीत छिड़ गए और उसकी बहादुरी के किस्से प्रचलित हो गए। उसके गांव का नाम भी उस दिन से दुल्लेवाल पड़ गया।

जीऊणा मौड़

दलीपकौर टिवाणा

''घर-घर पुत्त जम्मदे जीऊणा मौड़ ना किसे बन जाणा''—यानी, बेटे घर-घर में पैदा होते हैं लेकिन जीऊणा मौड़ कोई नहीं बन सकता।

यह बहुत पुरानी बात नहीं, न निरी काल्पनिक कथा ही है। बीसवीं सदी के शुरू का एक दिन था। गरमी का मौसम था। दोपहर अपने शिखर पर थी।

जिला संगरूर के मौड़ गांव में एक अजनबी, जमींदार खड्गसिंह का घर पूछता-पूछता हुआ आ गया।

बेशक यह घर खड्गसिंह का ही था, लेकिन वह इस वक्त घर में नहीं था। घर में उसका बेटा जीऊणसिंह था।

अजनबी आदमी 'सत सिरी अकाल' कह कर चारपाई पर बैठ गया।

''मैं काले पानी से आया हूं...'' अजनबी ने बताया।

जीऊण दूध ले आया। ढेर सा मीठा डाल कर।

''किशने ने संदेश भेजा है कि भई अगर तू मेरी मां का जाया है तो डोगर को जिंदा न छोड़ना, उससे मेरा बदला लेना जिसने मुझे धोखे से पुलिस के हाथों पकड़वा दिया और काले पानी पहुंचा दिया।''

जीऊणे ने संदेश सुना और तिनके से धरती कुरेदने लगा।

''तेरा भाई तो हर तरफ से वंचित हो गया और यह साला मौज करता रहे ! और फिर किस लिए उम्र भर का कलंक मोल लिया जाए कि, भाई का बदला नहीं लिया गया। अगर गैरत नहीं तो फिर इंसान बिलकुल ढोर-डंगरों जैसा है। दुनिया से क्या ले जाना है ? देखना, घर में औरतों को इस बात की भनक तक न मिले। औरतें रो-पीट कर आदमी को कमजोर बना देती हैं। किशना बड़ा उदास बैठा था। मैंने कहा, तेरा संदेश पहुंचा कर अपने घर जाऊंगा। और फिर वह मेरा सगा चाचा था। मेरे बापू को चौपाल में उसने गाली दी थी। चार पहर के भीतर उसी चौपाल में लाकर सिर टांग दिया। बीस बरस काले पानी काट आए, अपना क्या घिस गया ! अब कोई साला यह तो कहने वाला नहीं कि भई बाप को गालियां खिलवा कर तुम लोग घर के भीतर घुस गए थे...'' अजनबी कहता गया।

उसी रात जीऊणा घर से चला गया। जाकर डाकुओं से मिल गया।

उसकी मां आठ-आठ आंसू रोती रही। बाप सिर पकड़ कर बैठ गया। अभी तो उसे किशने का दुख भी नहीं भूला था। शेर जैसे जवान बेटे को वह काले पानी के लिए गाड़ी में बैठा कर आया था। क्या पता, जीते जी उसका दोबारा मुंह भी देखेगा या नहीं ? वह तो सोचता था, चलो, अब आराम से जीऊंगा।

किशने की वजह से उसे पुलिस रोज तंग करती थी। न जाने कितनी बार पुलिस वालों ने उसे और जीऊणे को थाने में ले जाकर पीटा था और किशने के ठिकाने के बारे में पूछा था। लेकिन वह क्या बताता, उसे किशने के ठिकाने का भला क्या पता था।

वह तो खुद तभी से किशने के साथ झगड़ता रहता था, जब कुएं के पास कोठरी में उसके पास ऐरे-गैरे आदमी आने लगे थे, जब वह वहीं घड़े दबा कर शराब बनाने लगा था। उसे तो यह बात बिलकुल ही पंसद नहीं थी कि किशना घराने के बेटे-बेटियों वाले लच्छन छोड़ कर नाचने वालों की तरह शौकीन बन कर ठलुआ घूमता रहे। शायद बाप के इस क्लेश की वजह से ही वह घर-बार छोड़ कर डोगर और खडियाल के जैमल के साथ मिल कर मार-धाड़ करने लगा था

उस दिन किशने का बाप बहुत दुखी और शरमिंदा हुआ था, जिस दिन किशने और उसके साथियों ने गांव के बनिये की ही बारात लूटी थी। गांव के लोगों ने उसे चौपाल में बुला कर कहा था कि तेरे बेटे के ये काम ठीक नहीं। उसने खुद गांव वालों की इस बात की हामी भरी कि बासदेव सरदार इस बात की इत्तिला थाने में दे आए। इसी बात पर थाने वालों ने मौड़ा गांव में चौकी बैठा दी थी।

जब किशने को पता चला तो वह अपने साथियों को साथ लेकर गांव पहुंचा। उसने चौपाल में खड़े होकर बासदेव को गालियां दीं, फायर किए। चौकी के सिपाही डर कर भाग गए और किशना और उसके साथी ने बासदेव की हत्या कर दी।

सरकार सख्ती करने लगी। पुलिस उसके बाप और भाई जीऊणे को पकड़ कर ले गई। उनकी बहुत पिटाई हुई। किशने के सिर पर इनाम रख दिया गया। उनके घर में ताला लगा दिया गया।

किशने ने जैमल से कहा, "तू मेरा भाई है, मेरी मदद कर। पुलिस का पेट भर और मेरा पीछा छुड़ा।" लेकिन जैमल ने कहा, "मेरे पास कुछ नहीं है।" किशने ने कहा, "हम लोगों ने इतने डाके मारे हैं, कितनी बारातें लूटी हैं, तीयों में कितने जेवर उतारे थे, पुनाम के जैनियों के घर से ही कितना माल लाए थे, घड़ाम के साहूकार के घर से कितनी नकदी मिली थी। इन सब में से अभी तो मैंने अपना हिस्सा भी नहीं लिया।"

जैमल ने कहा, "मेरे पास जो कुछ था, सब खत्म हो गया है।" किशना चुपचाप वहां से चला गया। लेकिन उसने बात अपने मन में ही रखी।

जैमल की औरत ने भी जैमल को समझाया कि "किसी की अमानत मारना बुरी बात है। कठिन समय में तो लोग दोस्त की खातिर जान तक न्यौछावर करने के लिए तैयार हो जाते हैं और तू लालच में आ गया है। दोस्त से विश्वासघात करने वाले को तो दोनों लोकों

में जगह नहीं मिलती। मैं हाथ जोड़ती हूं। अगर किशने के जी में कहीं मैल आ गया, तो तेरी खैर नहीं।''

लेकिन जैमल ने एक न सुनी। बोला, ''बकवास न कर, मैंने इस तरह के मलंग बहुत देखे हैं।''

कुछ दिनों बाद किशने ने जैमल से आकर कहा कि एक बारात लूटनी है, मेरे साथ चल। जैमल लालच में आ गया। गांव से बाहर आकर किशने ने उससे कहा, ''तूने मेरे साथ विश्वासघात किया है, लेकिन मैं तुझे धोखे से नहीं मारूंगा, सामने आकर लड़ ले, मैं तुझे मार डालूंगा।'' जैमल ने फायर किए, किशना बचाव कर गया। फिर किशने ने ऐसा निशाना साधा कि गोली जैमल का सीना चीर गई।

जैमल को मार कर किशने ने उसके घर जाकर उसकी बीवी को बताया कि मैंने जैमल को मार डाला है।

जब डोगर को इस बात का पता चला तो कहने लगा, ''यह बात बहुत बुरी है। जिसे एक बार दोस्त कह दो, फिर उसका पीछा देखना पाप है। अब किशने का कोई विश्वास नहीं।''

चतरे के हाथ संदेश भेज कर डोगर ने किशने को डस्के में बुला लिया और कहा कि तेरे बचाव का कोई तरीका निकालें। उसकी बहुत खातिर की। बकरा पकाया। शराब पिलाई। जी भर कर शराब पीने के बाद जब किशना सो गया तो बाहर से ताला मारके डोगर बलाढे थाने में चला गया। बेशुमार पुलिस आ पहुंची। घर को घेर लिया गया, और इस तरह किशना पकड़ा गया।

विलायत में मलिका को तार गया कि डाकू किशना पकड़ लिया गया हे। हुक्म हुआ कि उसे उम्र-कैद देकर कालेपानी भेजो।

उसी किशने भाई का आज जीऊणे मौड़ को संदेश मिला था। शक तो जीऊणे के दिल में पहले भी था, लेकिन अब पक्का हो गया कि डोगर ने मित्र-द्रोह किया था और किशने को खुद पकड़वाया था।

उस रात बूढ़े बाप को सोता छोड़ कर, गंडासा कंधे पर रख कर, गांव को प्रणाम करके वह वहां से चल पड़ा।

सुबह जंगल में चढ़ी। सामने एक गोरा, शिकार खेल रहा था। बंदूक एक तरफ रख कर वह पानी पीने लगा तो जीऊणे ने झपट कर बंदूक उठा ली और गोरे के शिकार के लिए निशाना साधा। गोरे ने हाथ जोड़े, मिन्नतें कीं। वह कांप रहा था। जीऊणे को तरस आ गया। उसने कहा, ''जा भाग जा, बंदर !'' गोरा घोड़े पर सवार होकर भाग गया।

आगे गया तो डाकुओं ने जीऊणे का पूरे दिल से स्वागत किया, सिर-माथे पर बैठाया। एक तो वह किशने का भाई था; फिर उसके पास इतनी बढ़िया बंदूक थी; तीसरे, वह तगड़ा जवान था।

जीऊणे ने एक ही शर्त रखी : ''मेरे गांव की ओर कोई मैली आंख से न देखे। मेरे

गांव की बहन-बेटी सबकी बहन-बेटी होगी।" डाकुओं के साथ मिल कर बाकी चारों जिलों में उसने भूचाल सा ला दिया। जगह-जगह डाके मारे, अमीरों को लूटा, बारातें रोकीं, सुनारों को उजाड़ा। जगह-जगह से पुलिस को जीऊणे मौड़ की मार-धाड़ की रपटें पहुंचती थीं। पुलिस उसका पीछा करती थी। लेकिन जीऊणे मौड़ हाथ न आता। आखिर उसके सिर पर इनाम रख दिया गया। सब लोग उसके नाम से कांपते थे, लेकिन उसके अपने गांव के लोगों ने उसे कह छोड़ा था, "तू हमारा बेटा है। बड़ी खुशी से गांव में आया-जाया कर। जब पुलिस आये तो इधर-उधर टल जाया कर।"

लूट का माल वह कडियाल के बनिये, काशीराम को दे आता। कुछ दिनों बाद काशीराम के मन में बेईमानी आ गई। पुलिस को बता आया, फलां दिन जीऊणे मौड़ मेरे घर आएगा। पुलिस आ पहुंची। जीऊणे भी आ रहा था कि एक बुढ़िया भागी हुई गई और जीऊणे को गांव से बाहर ही जा मिली और कहने लगी, "वे जीण जोगेआ तू, किस पर एतबार कर बैठा है ? बनिये की जात तो धेले पर प्राण दे दे। आगे तो पुलिस बैठी है।"

उस वक्त तो जीऊणे पीछे मुड़ गया, लेकिन जब पुलिस चली गई तो उसने काशीराम की खूब पिटाई की। काशीराम ने मिन्नत-चिरौरी की, पैरों पर हाथ लगाया तब कहीं जान छूटी।

एक दिन जीऊणे लोंगोवाल के पास से गुजर रहा था। गांव के पास तीज लगी थी। वहीं जा धमका। जमीन पर चादर बिछा दी और बहू-बेटियों को हुक्म दिया, "सब जनी गहने उतार-उतार कर रखती जाएं।" जबरदस्त के आगे किसकी चलती है ? दिल पर पत्थर रख कर वे गहने उतार-उतार कर रखती जाती थीं। एक बोली, "अरे वीरा ! मेरे ससुराल वाले तो बड़े झगड़ालू हैं। कहेंगे, जा, जाकर गहने बनवा कर ला अपने बाप से। मेरे बाप ने तो शादी के वक्त भी जमीन रेहन रख कर किसी तरह काम चलाया था। अरे वीर, मैं तो तेरी बहन जैसी हूं।"

जीऊणे के मन में न जाने क्या आया, उसने सब बहुओं, लड़कियों से कहा, "ले जाओ, सब अपने-अपने गहने।" खाली चद्दर झाड़ कर वहां से चल पड़ा।

अगले गांव से गुजरते वक्त उसे खयाल आया कि उसे तो बहुत भूख लगी हुई थी। आस-पास नजर दौड़ाई। एक लड़की रोटी लेकर खेत की तरफ जा रही थी। पास जाकर बोला, "बहन, रोटी खिलायेगी ?"

"आहो, वीर !" कह कर लड़की ने सिर पर से छाछ का लोटा उतारा। पोने में लिपटी रोटियां खोलीं, प्याज छीला, और पत्ते में अचार रखा। पेड़ की छांह में बैठ कर जीऊणे मौड़ को रोटी खिलाई।

"जीती रह, बहन !" कह कर जीऊणे ने उसे पच्चीस रुपये दिए और सिर पर हाथ फेर कर चला गया।

कुछ दिनों बाद उसने दौलेआल गांव में किसी का बहुत बढ़िया घोड़ा जा खोला। पीछे खींचने के कारण खूंटा उखड़ कर जीऊणे की नाक में आ लगा। जख्म हो गया। निशान

पड़ गया।

घोड़े पर सवार होकर, वह डोगर के गांव पहुंचा। उसने पाली के हाथ संदेश भेजा, "अगर बाप का बेटा है तो सामने आ जा। धोखे से मेरा भाई पकड़वाया था, अब नये जमाई से बच कर कहां जाएगा ?"

संदेश पाकर डोगर का खून खौल उठा। उसने बंदूक भर ली। कारतूसों की पेटी कंधे पर रख ली और घोड़ी पर जीन कस ली। बोला, "आज जीऊणे मौड़ की मौत ही उसे यहां तक ले आई है।"

जाते वक्त डोगर की घरवाली ने रोका और कहा, "तू मत जा, रात को मुझे बहुत बुरे-बुरे सपने आते रहे हैं—गांव में आग लग गई और तू बीच में जल गया। किसी ने मेरी कुर्ती में से जंजीर उतार ली।"

लेकिन डोगर बोला, "तू फिक्र न कर। साला जीऊणा मेरे सामने क्या चीज है ! किशने को तो कालेपानी ही पहुंचाया है, इसे अगर जहन्नुम में न पहुंचाया तो क्या याद रखेगा !"

जिस वक्त वह घर से निकला तो कुत्ते ने कान झटकाए और आगे जाने पर मुर्दा दिखाई दिया। उसका माथा ठनका, लेकिन उसने ध्यान न दिया। अभी वह ज्यादा दूर नहीं गया था कि आगे एक पंडित मिल गया। खेत में बायीं तरफ तीतर बोला। और आगे एक विधवा औरत छीकें मार रही थी। शगुन तो सारे ही बुरे हुए थे।

डोगर ने टेंट में से आधी बची शराब की बोतल निकाल कर मुंह में उंड़ेल ली और खाली बोतल जोर से फेंक दी। मूंछों पर ताव देकर मैदान में आ पहुंचा।

जीऊणा बोला, "डोगरा, सूरमा कभी किसी को धोखे से नहीं मारता, पहले तू वार कर।"

डोगर ने फायर किया। जीऊणे की घोड़ी नीचे बैठ गई, गोली सिर के ऊपर से निकल गई। डोगर ने फिर गोली चलाई। जीऊणा वार बचा गया और दूसरे ही क्षण निशाना साध कर डोगर को घोड़ी से गिरा दिया।

डोगर के घर में रोना-पीटना शुरू हो गया। उधर किसी ने मौड़ गांव में जाकर बता दिया कि जीऊणे ने डोगर को मार कर किशने का बदला ले लिया है। लोग कहने लगे, "सदके ऐसे भाई के ! भाई हो तो ऐसा।"

बलाढे से पुलिस चढ़ी जीऊणे को पकड़ने के लिए। लेकिन जीऊणा इतनी जल्दी हाथ आने वाला नहीं था।

डोगर को मारने के बाद जीऊणा एक रात अपने घर पहुंचा। जाकर बाप के सामने माथा टेका।

"क्यों मेरे सफेद बालों की इज्जत बर्बाद कर रहे हो ? इससे तो अच्छा था कि पैदा ही न होते। मैं निपूता ही अच्छा था। आए दिन पुलिस गांव में आ धमकती है। बहन-बेटियों का बाहर निकलना मुश्किल हो जाता है।"

जीऊणा ने कहा, "बापू, क्यों गुस्सा करता है ? मैंने अपना काम खत्म कर लिया है। कहो तो कल थाने मैं पेश हो जाऊं ?"

"थाने...नहीं...नहीं, वे लोग तो तेरे लहू के प्यासे फिरते हैं। तुझे गोली मार देंगे। सरकार ने तेरे सिर पर पांच सौ का इनाम रखा है। हमारे गांव वाले भले हैं, नहीं तो कभी का कोई पुलिस में तेरी खबर दे देता। तू दिन निकलने से पहले ही यहां से चले जाना। मैं अभी तेरे लिए रोटी लाता हूं। मेरे घर का तो नाम ही तेरे साथ है। मैं तो आज मरा या कल मरा।"

कुछ दिनों बाद जीऊणे और उसके साथियों ने एक बारात घेर ली। बहू का जेवर-छल्ला उतरवा लिया। बारातियों से सारा रुपया-पैसा धरवा लिया। नाक के निशान से जाट ने पहचान लिया कि यह तो जीऊणा मौड़ है। हाथ बांध कर जाट ने प्रार्थना की, "जमीन रेहन रख कर इस लड़के की शादी की। मांग कर बहू को जेवर-छल्ला पहनाया। रब्ब की दुहाई, तू है हमारा जाट भाई। लूट साहूकारों को, जिन्होंने लूट मचाई।"

यह सुन कर जीऊणे मौड़ ने जेवर-छल्ला सब लौटा दिया। अपने पास से एक हजार रुपया दिया और 'सत सिरी अकाल' कह कर वहां से चला आया। जाट कहने लगे, "जीता रहे जीऊणा मौड़ भाई हमारा !"

एक दिन पता नहीं जीऊणे को क्या सूझी कि नाभा के राजा हीरासिंह के महलों में जाकर उसकी घोड़ी निकाल लाया। बंदूक तान कर संतरी को धमकाया। आते वक्त कह आया, "कह देना महाराजे को, जीऊणा मौड़ ले गया है घोड़ी तेरी।"

लोग दंग थे कि जीऊणा मौड़ राजा की घोड़ी कैसे ले गया। राजा ने बेशुमार पुलिस उसके पीछे लगा दी। आखिरकार पुलिस ने घेरा डाल कर एक जगह सोये हुए जीऊणे को पकड़ लिया।

हस्स के जीऊणा आखदा घोड़ी बड़ी कमाल,
बक्की सांभ लओ आपदी मैं देखी सी चाल ।[1]

अगले दिन महाराजा उसे जेल में मिलने आया। पूछा, "क्या हाल है ?" बोला, "कैदियों के लिए लोहे के पिंजरे बनवाओ, इस तरह की जेल में से तो वे भाग सकते हैं।" महाराजा हंस पड़ा और बोला, "अच्छा तो भाग कर दिखा।" क्योंकि महाराजा जानता था कि इतने सख्त पहरे में, सीखचों वाले दरवाजों में से, जेल की ऊंची फसील से भला कोई कैसे भाग सकता है ?

उसी रात जीऊणा जेल में से भाग गया।

जीऊणे मौड़ का नाम लेकर लोग जगह-जगह डाके मारने लगे। डर के मारे पुलिस भी जल्दी से मौके पर नहीं पहुंचती थी।

एक दिन एक ब्राह्मण अपनी लड़की को ससुराल से ला रहा था। जंगल में बदमाशों

---

1. जीऊणा हंस कर कहता है, "घोड़ी बड़ी शानदार है। अपनी घोड़ी संभाल लो, मैं तो सिर्फ इसकी चाल देख रहा था।"

ने उसे घेर लिया। जब लड़की ने देखा कि साठ साल के ब्राह्मण की उन बदमाशों के सामने पेश नहीं जा रही तो उसकी चीखें निकल गईं। दैवयोग से जीऊणा मौड़ वहां से गुजर रहा था। उसने बदमाशों को जा घेरा।

"तू कौन होता है, बीच में आने वाला ?" एक बोला।

"मैं हूं तुम्हारा बाप जीऊणा मौड़," वह गरज उठा।

बदमाश लगे थर-थर कांपने और उसके पैरों में गिरने। उसने उन्हें जूते लगा कर छोड़ दिया और ब्राह्मण और लड़की को उनके ठिकाने पर पहुंचा दिया। ब्राह्मण ने उसे सौ-सौ आशीर्वाद दिए और उसे गऊ-गरीब का रक्षक बता कर घर-घर जीऊणे मौड़ का यश गाने लगा।

उस समय के कवियों ने कवित्त जोड़ा :

जीऊणा मौड़ साध गऊ गरीब दी करे सेवा,
खब्बी खानां दी अलख मुकाऊंदा जी ।
जेड़े बादशाह दे घर करे चोरी,
पर्चा छाप के पहलां लगांवदा जी ।
शीहनी मां ने जम्मेया शेर जीऊणा,
नहीं लुक्क के वकत लंघावदा जी ।[1]

एक दिन जीऊणे मौड़ के मन में आया कि देवी मां हर जगह मेरी रक्षा करती रही हैं, उनके दर्शन के लिए जाना चाहिए।

उसने सारे राजाओं को खबर भेजी, "नैनादेवी के मंदिर जाऊंगा मैं। जिसके आसरे मैंने फौजों के नाक मोड़े हैं, उस पर सोने का छत्र चढ़ा कर आऊंगा मैं। जोर लगा कर आ जाना पकड़ने मुझे, नहीं मरने से मुंह छिपाऊंगा मैं।"

नैनादेवी के दर्शनों के लिए जाते वक्त जब वह पटियाला शहर पहुंचा तो पुलिस की वर्दी पहन कर हवलदार बन गया और उसने किले की दीवार पर पर्चा लगा दिया कि जीऊणा मौड़ अदालत बाजार में घूम-फिर रहा है, पकड़ ले जो पकड़ सकता है। शाम के सात बजे वह स्टेशन से नैनादेवी के लिए गाड़ी में सवार होगा।

चप्पे-चप्पे पर पुलिस खड़ी हो गई। सारे रास्ते रोक लिए। फिर भी जीऊणा मौड़ सब की आंखों में धूल झोंक कर शाम के सात बजे साधु के वेष में नैनादेवी जाने के लिए गाड़ी पर चढ़ गया।

पुलिस भी साथ ही गई। सारे डिब्बों की तलाशी ली गई। लेकिन जीऊणा मौड़ उन्हें कहीं न मिला।

जीऊणा मौड़ गाड़ी से उतर कर पहले आनंदपुर साहब के गुरुद्वारे में दसवें गुरु के

---

1. जीऊणा मौड़ साधु, गऊ और गरीब की सेवा करता है। बड़े-बड़े अकूड़खानों का अहंकार तोड़ता है। बादशाह के घर चोरी करने से पहले पर्चा छाप कर लगाता है। शेरनी मां ने जीऊणे शेर को पैदा किया है। वह छिप कर जिंदगी के दिन नहीं काटता।

निमित्त सवा सौ का चढ़ावा चढ़ाने गया। दसवें गुरु, जिन्होंने हिंद की खातिर अपने चार बच्चे कुर्बान किए थे।

फिर वह नैनादेवी के मंदिर में पहुंचा। चारों तरफ से पुलिस ने मंदिर को घेर रखा था। उसने देवी के मंदिर में सोने का छत्र चढ़ाया। देवी के चरणों में सीस नवाया। देवी ने दर्शन दिए। जीऊणे मौड़ ने जनम-मरण का संशय दूर किया।

पुलिस ने घेरा छोटा किया। नाक के दाग से जीऊणा पहचाना भी गया। पकड़ने लगे तो जीऊणे साधु ने चिमटा चलाया। पांच-दस पुलिस वालों को मार भगाया। गोली चलने लगी। जीऊणे के पास राइफल थी नहीं।

आखिर जीऊणे को घेर कर गिरफ्तार कर लिया गया। देवी को नमस्कार करके वह पुलिस के साथ चल पड़ा।

उसे फिरोजपुर जेल में लाया गया, पुलिस के कई सौ सिपाहियों की निगरानी में।

मलिका को फिर विलायत तार भेजा गया कि किशने डाकू का भाई ज़ीऊणा पकड़ लिया गया।

मलिका की ओर से फांसी का हुक्म हुआ।

आठ दिन बाद निश्चित हुई फांसी की तारीख। अफसर ने कहा, ''खा-पी ले जो चित्त चाहे। मिल ले जिससे जी करे।''

जीऊणा सिंह ने कहा, ''सिर्फ खाने-पीने के लिए तो नहीं हम जग में आए। जग याद रखेगा कि भाई, भाईयों की बांह होते हैं। बाकी रही बात मिलने की, अपने आप चल कर आयेगा, जिसके चित्त में तड़प उठेगी।''

जीऊणा की एक बहन थी गोविंदी। वह खूब लड़ी थी। मुकदमा पहुंचा बड़े लाट तक, लेकिन पेश न चली कोई।

आठवां दिन भी आ पहुंचा।

सबको 'सत सिरी अकाल' करके जीऊणा मौड़ तख्ते पर झूल गया।

बहन गोविंदी, विलाप करने लगी :

वे तीयां दे दिन कीनूं उडीकां गी,
कौन भेजूगा संधारे वे मेरेया सूरमेआं वीरा ।[1]

ऐसा कर गया जग में नाम अपना जीऊणा मौड़। लोग रखेंगे याद जब तक दुनिया कायम है।

मावें घर-घर पुत्त जम्मदे
जीऊणा मौड़ ना किसे बण जाणा ।

---

1. तीज के दिन किसका इंतजार करूंगी, मुझे कौन 'संधारा' भेजेगा—मेरे सूरमा भाई ?

कैमा मलकी

गुलजारसिंह संधू

"गढ़ मुगलाने दीआं नारां पींछां झूलदीआं"[1] तीजों का गिद्धा पूरे जोरों पर था। गिद्धे वाली लड़कियां पीपल की छांव में गिद्धे की ताल पर झूले वाली लड़कियों को हुलारा दे रही थीं। गढ़ मुगलाने के इस पीपल के झूले सरहदी इलाके में दूर-दूर तक मशहूर थे। मालूम नहीं कितनी पीढ़ियों से यह पीपल लड़कियों को झूला झुलाता आया था। इसकी टहनियां मजबूत थीं और पत्तों की छांव सघन। नंबरदार की बेटी मलकी गिद्धे की अगुआ थी। वह झूले पर चढ़ती तो बूढ़े पीपल की जड़ें तक हिला देती थी।

मलकी का बाप राय मुबारक गांव का नंबरदार ही नहीं, बल्कि सारे इलाके में प्रतिष्ठित आदमी था। उसके दो बेटे थे जो पेड़ों के तने जैसे मजबूत थे और लाठियों सरीखे जवान थे। बेटों के नाम राहून और महरून थे। उसका भाई दरीया दिल्ली में अकबर के दरबार में सूबेदार था। सरकारी दरबार में पहुंच होने के कारण इस खानदान की गुड्डी और भी चढ़ी हुई थी। राय मुबारक, दरीया, राहून और महरून एक-दूसरे से चार-चार, छह-छह बरस छोटे थे। इकट्ठे बैठे हुए वे सब भाई ही मालूम होते थे। चारों मर्द कस्बे की दीवार समझे जाते थे। जब वे लाठी उठा कर खड़े हो जाते थे तो हवा का रुख बदल देते थे।

मां-बाप के रोब की वजह से मलकी भी दिलेर थी। उसका माथा चौदहवीं के चांद की तरह चमकता था। वह किसी हीर या सस्सी से कम न थी—गांव की इज्जत और इलाके भर का मान। भरपूर जवान होने के कारण उसे जवानी की शोखियों का ज्ञान तो था, लेकिन उसकी उदासियों का नहीं। उसे कभी इस बात का सपना भी नहीं आया था कि जवानी के झूले की रस्सी टूट भी सकती थी। यहां तक कि वह टहनी ही टूट कर धरती पर गिर सकती थी, जिस पर झूला डाला हुआ था।

मलकी की मां गोंदलां को बेटी की जवानी जैसे काटने को आ रही थी। घर में जवान बेटी हो तो कौन मां सुख की नींद सो सकती थी ? किसी छोटी सी बात से भी परिवार की इज्जत मिट्टी में बर्बाद हो सकती थी। जितनी देर तक जवान बेटी के हाथ रंग कर उसे अपने घर नहीं भेजा जाता, मां के कलेजे में ठंडक नहीं पड़ सकती थी। बाप ऐसा था कि कोई

1. गढ़ मुगलाने की नारियां झूला झूल रही हैं।

बात ही नहीं सुनता था। उसे अपनी बेटी कल की बच्ची मालूम होती थी। गोंदलां के लिए न जाने कौन सी प्रलय आई हुई थी ! जवानी ही तो थी। वह सोचता, जवानी किस पर नहीं आती ?

बाप ने तंग आकर छोटे भाई दरीये को खत लिखवा भेजा। मलकी उसकी भी उसी तरह बेटी थी, जिस तरह कि राय मुबारक की। बेटी की इज्जत सब की साझी होती है। दरीया सरकारी दरबार में कोई योग्य वर तलाश कर सकता था। इससे कोई और फायदा था या नहीं, लेकिन इतना फायदा जरूर हुआ था कि मलकी की मां ने अपने घर वालों को यह बात कहनी बंद कर दी थी।

गोंदलां को इस बात की खुशी भी थी और दुख भी था। खुशी इस बात की थी कि उसकी बेटी के लिए वर की तलाश शुरू हो गई थी, और दुख इस बात का था कि अगर दरीये को कोई योग्य वर मिल गया तो गोंदलां अपनी बात को दुहरा नहीं सकती थी। बात यह थी कि रिश्ते में गोंदलां की एक बहन लालो थी, जो तख्तहजारे के सरदार दुलारे से ब्याही हुई थी। लालो के जेठे लड़के के जनम के समय गोंदलां बहन का प्रसव करवाने के लिए तख्तहजारे गई थी। बहन के घर जो बालक जन्मा था उसका तेज सूरज से भी ज्यादा था। गोंदलां को यह बालक, जिसका नाम कैमा रखा गया था, अपने बेटों से भी प्यारा था। वह सहनशील था, दंगा कम करता था। गोंदलां की सूझ के अनुसार कैमा शील स्वभाव वाला मर्द बनने वाला था। गोंदलां तेज मिजाज वाले परिवार से तंग आई हुई थी। उसने बहन लालो को वचन दिया था कि अगर अल्लाह को मंजूर हुआ तो तख्तहजारे और गढ़ मुगलाने का साझा पुश्त-दर-पुश्त चलता जाएगा। अल्लाह की मंजूरी से उसका अर्थ अपनी कोख हरी होने से था। दो बेटों के जन्म के बाद उसने पीरों से बेटी मांगी थी और पीर ने कभी किसी को निराश नहीं किया था। उसने लालो को वचन दिया था कि अगर उसके घर बेटी पैदा हुई तो उसकी शादी वह कैमे से ही करेगी। कैमे के बाप या गोंदलां के पति को इसमें क्या एतराज हो सकता था ?

एतराज तो उसे कोई नहीं हो सकता था, लेकिन गोंदलां अपने पति के टेढ़े स्वाभाव से परिचित थी। उसे जिस रास्ते पर चलाया जाए, वह उससे उल्टी राह पर चलता था। न जाने उसे उल्टा चलने में क्या मजा आता था ! यही कारण था कि उसने यह बात अपने पेट में ही रखी थी, जिसका इस्तेमाल वह मौका आने पर करना चाहती थी। गोंदलां दरीये की 'ना' का इंतजार करने लगी। दरीये की 'ना' आने पर वह अपना सुझाव आसानी से ही मनवा सकती थी।

लेकिन खत पहुंचने की देर थी कि दरीया मंजिलें पार करके मुगलाने पहुंच गया। मलकी को वरों की क्या कोई कमी थी ? वह इस जिम्मेदारी को निभाने के लिए उतावला दिखाई देता था। दरीये के घर पहुंचते ही मरदों के चेहरे खुशी से खिल उठे और औरतों के मन में तनाव आ गया। मालूम नहीं, अब क्या होने वाला था ! पकवान बनाते समय गोंदलां के कान मरदों की बैठक की तरफ थे और मलकी दीवार के साथ लगी बैठी थी।

मालूम नहीं, दरीये ने राय मुबारक को क्या कहा कि सारे घर में खामोशी छा गई। जैसे सांप सूंघ गया हो। आस-पास की हवा से स्पष्ट था कि दरीये की तजवीज मानी नहीं गई थी। इस बात का आभास गोंदलां को भी हो गया था और मलकी को भी। तजवीज क्या थी, उसका सिवाय मरदों के किसी को कुछ पता नहीं था। मरद यह सोच कर दुखी थे कि दरीये को क्या हो गया था। "अच्छा, सोचेंगे," कह कर नंबरदार ने बातों का रुख मोड़ दिया था। वे लोग खेती-बाड़ी की बातें करते-करते सो गए थे।

कहने को तो सब सो गए थे, लेकिन सोया कोई भी नहीं था। दरीये को इस बात का दुख था कि भाई ने उसकी बात नहीं मानी। और भाई को इस बात का दुख था कि दरीया उससे किस तरह की बात मनवाने चला था। भतीजे भी बाप का साथ दे रहे थे।

उधर गोंदलां और मलकी दालान में सोई हुईं एक-दूसरे के दिल की धड़कन सुन रही थीं। इस बात का तो मां-बेटी को निश्चय हो गया था कि दरीये की बात नहीं मानी गई थी, लेकिन इस बात की उन्हें कोई खबर नहीं थी कि वह तजवीज क्या थी और उसके अस्वीकार होने के बाद अब क्या होने वाला था।

गोंदलां को लग रहा था कि उसके हित में यह ठीक ही हुआ है, लेकिन जब तक पूरी बात खुल नहीं जाती, तब तक उसके टेढ़े पति और उससे भी ज्यादा टेढ़े लड़कों का क्या भरोसा था ? गोंदलां ने मलकी के मन में कैमे का जो नक्शा खींचा था, मलकी अब उसका मिट जाना बर्दाश्त नहीं कर सकती थी। लड़कियों को रौब-दांव वाले भाई ही पसंद हैं, लेकिन पति को शील स्वाभाव वाला होना चाहिए। वह कैमे के घर अमन-चैन से रहेगी, प्रेम का झूला झूलेगी, मलकी सोचती।

कैमा रिश्ते में रांझे का भतीजा लगता था। रांझे की बात अभी कल की ही तरह ताजी थी। रांझे का भतीजा होने के नाते कैमे के नाम के साथ इश्क का इतिहास जुड़ा हुआ था। मलकी की जवान आत्मा को कैमे के ऐतिहासिक बिंब ने बांध लिया था। जैसे उसके सिर पर जादू-टोना हो चुका हो। वह उस जंगल और हरे पैदानों के सपने देख चुकी थी, जिसमें पल कर रांझा जवान हुआ था। कैमा रांझे जैसा रूपवान न सही, रांझे से कम नहीं हो सकता था। मां ने भी बताया था कि वह शील स्वभाव और पक्के इरादे का था।

गोंदलां को तख्तहजारे में रिश्ता करने के अनेक फायदे दिखाई देते थे। लालो उसकी बहन थी, उसकी बांह। मलकी जैसी उसकी बेटी थी वैसी लालो की। कैमा जैसे लालो का बेटा था वैसे ही गोंदलां का भी बेटा था। खून खून ही होता है और पानी पानी होता है।

लेकिन दरीया खून को पानी और पानी को खून करने पर तुला हुआ था। सुबह होने तक यह बात सारे परिवार में फैल चुकी थी।

पता लगा कि दरीया अपनी भतीजी को अकबर बादशाह के घर में बैठाना चाहता था। बूढ़ा बादशाह मलकी की जवानी और हुस्न पर मस्त होकर दरीये को बड़ी से बड़ी इज्जत और मान दे सकता था। वह अपने रिश्तेदारों को तकलीफ नहीं होने देगा, चाहे वे राजपूत ही क्यों न हों। दरीया सूबेदार से जरनैल बन सकता था। यह अकबर का समधी बनने

वाला था। भला कोई समधी को भी अपने से छोटे स्थान पर रखता है ! दरीया तो जरनैल होने के सपने पाले फिरता था। यह बात चाहे बादशाह के दिमाग में भी न आई हो, लेकिन दरीया बादशाह की कमजोरी से परिचित था। एक बार भाई को मनाने को देर थी, दरीये के लिए राजदरबार के सारे दरवाजे खुल जाएंगे। अभी कल की ही तो बात थी कि अकबर ने सलीम से प्यार करने वाली अनारकली को इसलिए मरवा दिया था, क्योंकि उसने बादशाह का हुक्म नहीं माना था। दरीये को इस बात का पूरा एहसास था कि उसकी भतीजी किसी भी अनारकली से कम नहीं थी।

दरीये की इस बात को मुगलाने परिवार के सब लोग समझ गए थे। सुबह होने तक सारे घर के कोने-कोने में यह जहर फैल चुका था। सुबह जब इस जहर ने मां-बेटी को डंक मारा, तो वह भी विष घोलने लगीं। गोंदलां के हाथों में पला दरीया अपनी भतीजी को किस रास्ते पर चलाना चाहता था ! कल तक बड़ी भाभी से मांग कर खाने वाला आज राजदरबार में अपनी पहुंच की कितनी शान दिखा रहा था !

दूसरे दिन सुबह जब दरीया दिल्ली के लिए रवाना हुआ तो किसी ने दुआ-सलाम न की। राय मुबारक को अपने से बड़ा खानदान पसंद नहीं था। बड़े घरों वाले बेटियों पर दौलत का रोब डालते रहते हैं, अपने जैसे खाते-पीते जमींदारों की कोई कमी नहीं थी। वैसे भी लाड़ से पाली-पोसी बेटी को भला आंखों से कितना दूर रखा जा सकता था ! पांच सौ कोस दूर भेजी बेटी जीती-मरी एक बराबर है। जो बेटा-बेटी वक्त पर दुख-सुख भी न बांट सकें, उनका क्या फायदा ?

लेकिन दरीया तो सिर्फ अपने सुख की तलाश में था। राय मुबारक की 'ना' ने उसकी उम्मीदों पर पानी फेर दिया था। दरीये को लगा जैसे जरनैली तो एक तरफ रही, उसकी सूबेदारी भी छिन चुकी थी। कुछ इस तरह जैसे तरक्की की सीढ़ी चढ़ते हुए किसी ने उसकी बांह खींच कर उसे नीचे उतार दिया हो। वह धरती पर खड़ा गुस्से से कांप रहा था। वह इसका बदला लिए बगैर नहीं रहेगा, उसने मन ही मन फैसला किया।

घर में फूट पड़ गई। मलकी का चंचल मन चिंता में डूब गया था। जमींदार भाई जब लड़ते थे तो किसी न किसी का सिर लिए बगैर चैन नहीं लेते थे। भाइयों की फूट से बुरी और कोई फूट नहीं होती। दोनों एक-दूसरे के भेद जानते हैं। घर का भेदी लंका ढाए।

अब मलकी झूला झूलने जाती तो झूले की तख्ती पर पैर रखने को उसका जी न करता। किसी तरह मन मसोस कर चढ़ भी जाती तो दो-चार पेंगें चढ़ा कर हांफने लगती। पास वाली साथिनें जरा भी ऊंची पेंग चढ़ातीं तो उसका दिल डूबने लग जाता। पेड़ों को जड़ से हिला देने वाली मलकी पत्तों से डरने लग गई थी। सरकारी गजब उसके मां-बाप की मुश्कें बांध सकता था। कैमा तख्तहजारे बैठा रहता और इधर मलकी चिंता में डूब कर पागल हो जाती। उसे झूले वाला पीपल का पेड़ और छप्पर जैसे काटने को दौड़ते थे। जब मन ही मौज नहीं मांगता था तो फिर वह तन को क्या करती !

मौके का फायदा उठा कर गोंदलां ने राय मुबारक से मलकी का रिश्ता कैमे के साथ

करने की बात चलाई। तख्तहजारे का दुलारा बराबर का जमींदार था। सादू-समधी बनने का हकदार था। राय मुबारक की साली लालो भी बड़ी शांत स्वभाव की थी। बहुत कम आने-जाने के बावजूद राय मुबारक पर तख्तहजारे वालों के स्वभाव का असर था। जब भी एक साथ शिकार खेलने गए थे, आपस में खूब निभी थी। आदमी तो थोड़ी देर के अंदर ही पहचाना जाता है। राय मुबारक को तो यह रिश्ता याद ही नहीं था। अगर याद रहता तो फिर दरीये का इतना एहसान क्यों लेता ? बेटी भी मजे में बसती और भाइयों में फूट न पड़ती। अब उसे अपने आप पर गुस्सा आ रहा था। गोंदलां को भी इस बात का दुख था कि उसने यह बात इससे पहले ही घर में क्यों नहीं खोली थी। राय मुबारक के डर से उसने इतनी बात अभी भी दबा कर रखी हुई थी कि उसने बहन लालो को यह वचन बहुत पहले से दे रखा था।

जब कैमे के साथ रिश्ते की बात शुरू हुई तो घर के सभी लोग खुश थे। बराबर का खानदान था। अविश्वास की गरम लू की बजाय विश्वास की ठंडी हवा बहने लगी थी।

मलकी के मन में दिनोंदिन कैमे की मूरत निखरती आ रही थी। ज्यों-ज्यों कैमा उसके मन में जगह बना रहा था, मलकी को आलीजाह अकबर पर गुस्सा आ रहा था। चाहे दरीये ने जो प्रस्ताव रखा था, वह उसके अपने ही मन की उपज थी लेकिन बूढ़े बादशाह के साथ क्षण भर के लिए भी उसका नाम जोड़ा जाए, यह मलकी को पंसद नहीं था। उसका बादशाह से और बादशाह का उससे आखिर वास्ता ही क्या था ? दो तस्वीरें उसकी आंखों के सामने घूमती रहती थीं—हुस्न का देवता कैमा और बूढ़ा अकबर।

कैमे से सगाई होने के बाद मलकी के हुस्न की धूम तख्तहजारे में भी मच गई थी। गढ़ मुगलाने की हसीना को प्राप्त करने का शौक कैमे के मन में दिनोंदिन बढ़ता जा रहा था। कैमे और उसके परिवार को इस बात की खबर मिल चुकी थी कि राय मुबारक ने मलकी का रिश्ता कहां से छीन कर कहां किया था। अकबर बादशाह के बराबर तोले जाने के कारण कैमा फूला नहीं समाता था, लेकिन जब तक निकाह नहीं पढ़ा जाता, उसके मन में ठंडक नहीं पड़ सकती थी। निकाह से पहले वह मलकी के मां-बाप की मरजी का मोहताज था। उनकी मरजी में दरीये की मरजी विघ्न डाल रही थी। दरीये की मरजी कोई मामूली सी मरजी नहीं थी—इसकी पृष्ठभूमि में अकबरी जलाल और सरकारी दबाव भी शामिल था। कैमे का जी चाहता था कि वह उड़ कर मलकी से जा मिले, लेकिन सामाजिक रस्म-रिवाजों का दास होने के कारण उसका साहस नहीं होता था।

उड़ कर जाना कौन सा आसान था ? दोनों गावों के बीच दो नदियों की दूरी थी। तख्तहजारा जेहलम नदी के किनारे था और गढ़ मुगलाना सिंध नदी के किनारे।

दोनों के मां-बाप को दरीये पर भरोसा नहीं था। दोनों पक्ष मामले को ज्यादा लंबा करने के पक्ष में नहीं थे। दुलारा और राय मुबारक का आपस में आना-जाना बढ़ गया था। अब वे एक साथ शिकार खेलने के सपने देखने लगे थे। जेहलम से लेकर सिंध तक की सारी धरती उनकी होने वाली थी। वे अपनी मरजी के अनुसार चाहे जहां जा सकते थे।

दोनों को दोनों नदियों के शेर, बाघ, हिरन, तीतर, बटेर और मुर्ग-मुरगाबियां अपने ही मालूम होते थे। कल्पना में वे अपने ही शिकारी कुत्तों को जंगली हिरणों के पीछे भागता हुआ देखने लगे।

राय मुबारक ने शादी की तारीख पक्की कर दी।

"अगर तुम मेरी बात मानो तो हम इस मौके पर दरीये को न ही बुलाएं तो ठीक रहेगा।" गोंदलां ने सलाह दी।

"अरी भाग्यवान ! भला ऐसा भी कहीं होता है ? आखिर भाई, भाई ही होते हैं। दरीया कुछ नहीं कहेगा। घड़ी भर के लिए वह लालच में आ गया था। अब वह बात गई-बीती हो चुकी है।" राय मुबारक ने समझाया।

"लालची आदमी का कोई भरोसा नहीं होता, लेकिन तेरी मरजी है तो..." गोंदलां ने बात पति पर डाल दी। बेटों ने भी बाप की हां में हां मिला दी। किसी को दबाव डालना ठीक नहीं लगा। वे लोग दरीये से डरते भी थे। निमंत्रण भेज दिया गया।

शादी की तैयारी होने लगी। इधर मलकी के घर की लिपाई-पुताई हुई, उधर कैमे के घर की। इधर दहेज तैयार हो रहा था, उधर वरी तैयार हो रही थी। इधर अस्तबलों को सजाया जा रहा था, उधर घोड़े-घोड़ियों को। इधर मलकी का दिल धड़क रहा था, उधर कैमे का।

शादी के दिन दरीया भी आ गया। वह खच्चरों पर अंगूरी शराब लाद कर लाया था। उसके पास शाही आतिशबाजी थी और शाही कालीन थे। उसके चेहरे पर बीती हुई बातों का कोई असर दिखाई नहीं देता था। बेटी सबकी सांझी होती है, बेटी का दोषी नरक में जाता था।

निकाह की रात गढ़ मुगलाने के नंबरदार के घर जाम छलक रहे थे। बुजुर्गों की टोली हवेली में शराब पी रही थी और लड़कियां नये बहनोई को घर में घेरे बैठी थीं। छंद सुने जा रहे थे। सास अपने दामाद को साबित लड्डू खाने के लिए मजबूर कर रही थी। सालियां छेड़छाड़ में मस्त थीं।

निकाह हो चुका था। कैमा, मलकी एक-दूसरे के हो चुके थे। किसी को किसी बात का खौफ नहीं रहा था। दरीया अंगूरी शराब लाने के कारण दोनों घरों में चौधरी बना बैठा था। वह साकी था और बाकी लोग पीने वाले थे। राय मुबारक की हवेली में बोतलों के डांट खुल रहे थे और घर में शादी के गिद्धे[1] की धमकें पड़ रही थीं।

कैमा सालियों से छूट कर हवेली में आया ही था कि वह एक-एक करके कई जाम पी गया। कुछ तो शादी का चाव था और कुछ शादी की थकान थी। घूंघट में से उसे मलकी के चेहरे की जो झलक दिखाई दी थी, उसका भी नशा कम नहीं था। कुछ ही क्षणों में वह भी दूसरे लोगों के साथ जा मिला। वक्त बीतने पर सबके सब औंधे हो गए—क्या बाराती क्या घराती। सिर्फ दरीया होश में था जो अव्वल तो शराब पीता ही नहीं था और

1. पंजाबी लोकनृत्य।

अगर पीता भी था तो पीता कम था और छलकाता ज्यादा था। गिराता तो और भी ज्यादा था।

मौका ताड़ कर दरीये ने राय मुबारक, राहून, महरून, दुलारा और कैमे को कैद कर लिया। गांव के बाहर उसने सिपाही बैठा रखे थे। उसके हुक्म की देर थी कि सिपाही इन पांचों को बांध कर साथ ले गए। न कैदियों को होश था, न दूसरे लोगों को।

विजेता दरीया दिल्ली की तरफ चल पड़ा।

अगले दिन तड़के जाकर कहीं लोगों को खबर मिली कि रातोंरात गिद्धे के शोर, जामों की छनछनाहट और आतिशबाजी में कैसा अंधेर हो गया था ! गांव के नंबरदार के साथ-साथ दूल्हा और दूल्हे के बाप और भाइयों को भी गिरफ्तार कर लिया गया था। किसी की समझ में नहीं आ रहा था कि कौन किधर जाए। बेलगाम लोगों को संभालने वाला कोई नहीं रहा था। बादशाह का डर था और राजदरबार का आतंक था। हर आदमी बेइज्जती बरदाश्त करने के लिए तैयार था। गढ़ मुगलाने में पहली बार किसी ने बेइज्जती को इतनी बेशरमी से बरदाश्त किया था। सारा शहर चुप था। तख्तहजारे के गिने-चुने बाराती क्या कर सकते थे ? किसी को क्या मालूम कि दरीये के पास कितनी फौज थी !

गोंदलां ने रो-रो कर सिर की मेढियां नोंच ली थीं। मलकी की चीख-पुकार देखने वाली तो नहीं थी, लेकिन फिर भी लोग उन्हें देख-सुन रहे थे। सारा गढ़ मुगलाना देख रहा था, सारे बाराती देख रहे थे।

कैमे के जाते वक्त मलकी ने उसका मुंह तक नहीं देखा था। वह पति के जीते जी विधवा हो गई थी।

लेकिन मलकी का इरादा पत्थर की लकीर के समान था। वह कैमे की हो चुकी थी, और कोई माई का लाल उसे कैमे से विमुख नहीं कर सकता था। वह दरीये को या दरीये के बादशाह को क्या समझती थी ! जो काम बाहुबल से नहीं हो सकता था, वह अक्ल से हो सकता था। वह साधुनी बन कर कैमे की तलाश में निकल पड़ी। प्रेमी को पाने के लिए उसने रांझे वाला भिक्षापात्र हाथ में उठा लिया। घर से चलते वक्त उसने मां को भी नहीं बताया था। उसे डर था कि उसकी मां अपनी बेटी को इस बीहड़ रास्ते पर चलने की मनाही कर देगी। मलकी का फैसला अटल था।

दरीये का फौज-लश्कर काफी बड़ा था। बेड़ियों से जकड़े होने के बावजूद एक-एक कैदी के साथ तीन-तीन सिपाही थे। मलकी को ये खबरें आने वाले मुसाफिरों से मिलती थीं। मलकी के बाप और भाइयों के शेर-बब्बरों जैसे मुंह और कैमे की मनमोहिनी सूरत एक-एक मुसाफिर के मन में बसी थी। मलकी को इस बात की भी बड़ी तसल्ली थी कि वे सबके सब लोग जिंदा थे। दुख का क्या है, एक दिन आता है तो दूसरे दिन जा भी सकता है।

मलकी के पैर बिवाइयों से फट गए थे। उसने सैंकड़ों कोसों का सफर नंगे पैर तय करने का फैसला कर लिया था। बार-बार रास्ता नहीं पूछना पड़ता था। जगह-जगह

मील-पत्थर थे, कोस-कोस पर कुएं और किनारे-किनारे पेड़ थे। हर मंजिल पर रैन-बसेरा था। जहां कहीं पेड़ों की कमी होती, उसकी बिवाइयों से फटे पैर गरम मिट्टी में झुलस जाते थे। वह भाग कर मेड़ों पर उगी घास पर खड़ी हो जाती। पैरों को थोड़ा सा आराम देने के बाद फिर चल पड़ती। कहीं खाने को मिल जाता था, कहीं खाना भी नहीं मिलता था। घोर निराशा की इस हालत में आशा की एक ही किरण थी, वह भी कैमे का जिंदा होना। नहीं तो दरीये का क्या भरोसा था, कहीं मार कर दबा जाता। कभी वह काफिले के साथ जाकर मिल जाती, कभी पीछे रह जाती। एकाध बार उसने चोरी-छुपे कैमे को देखा भी था—बड़ा बेबस था, बहुत लाचार। यही हाल मलकी के बाप और भाइयों का भी था।

मलकी का यह सफर हज से भी बढ़ कर था। हज जाते वक्त आशा पूरी होने की संभावना होती है, यहां वह भी नहीं थी।

मंजिलें तय करता हुआ काफिला, कुरुक्षेत्र के मैदान के पास थानेसर जा पहुंचा। मलकी भी पीछे-पीछे जा पहुंची।

थानेसर में मलकी का एक भगतिन से मेलजोल हो गया। मलकी इस भगतिन के डेरे से भभूत लेने गई थी। बातों ही बातों में भगतिन ने मलकी का दुख भांप लिया था। सारी व्यथा सुनने के बाद भगतिन ने मलकी को सलाह दी कि वह अकबर बादशाह की राजपूत रानी की बेटी जमुना से मिले। भगतिन को विश्वास था कि अगर राजकुमारी जमुना चाहे तो सब कुछ हो सकता है।

मलकी जमुना के महल पर भिक्षा मांगने के लिए गई तो जमुना उसकी जवानी और हुस्न देख कर मोहित हो गई। इस उम्र में साधुनी बनने वाली इस सुंदरी में जरूर कोई न कोई रहस्य था। उसने मलकी को महल में बुला लिया। जमुना के पूछने पर उसने कैमे से शादी होने की अपनी सारी दर्दभरी कहानी सुना दी। जमुना में उसे कोई दैवी रूप दिखाई दिया, उसने यह बात भी नहीं छिपाई कि उसका चाचा उसे अकबर बादशाह के हरम में रखवा कर तरक्की पाना चाहता था।

हरमवाली बात सुनते ही जमुना के तन-बदन में आग लग गई। कोई मलकी को उसकी मां की सौत बनाना चाहता था। सौतों के दुख जमुना को भूले नहीं थे। वह अपने बाप के बुढ़ापे के इश्कों को भी नहीं भूली थी। उसने बादशाह के हुक्म से अनारकली का कत्ल होते देखा था, सिर्फ इसलिए कि वह बूढ़े बाप की बजाय उसके जवान बेटे सलीम पर मोहित हो गई थी। जो अनारकली को कत्ल करवा सकता था, वह मलकी के हरम में दाखिल होने के बाद जमुना की मां के साथ कौन सी भलाई करेगा ? मलकी की इस बात को सुन कर उसे लगा जैसे उसकी मां साधुनी बन कर भीख मांग रही है और उसकी जगह मलकी राजदरबार की मालिक बन गई है। यह ठीक है कि मलकी को देख कर यह विश्वास करना मुश्किल था कि वह ऐसा काम कर सकेगी, लेकिन यह बात मलकी पर निर्भर नहीं थी, करने-कराने वाला तो खुद बादशाह ही था।

राजकुमारी जमुना को एक ही बात की तसल्ली थी। वह बात यह थी कि अकबर

को अभी तक दरीये की चाल का पता नहीं था। उसे यह तो मालूम था कि वह शाही कुमुक लेकर बागियों को कुचलने के लिए गया था, लेकिन वे लोग इसलिए बागी हैं, क्योंकि उनकी बहन इतनी हसीन है। अगर बादशाह को यह बात मालूम होती तो वह मलकी को भी गिरफ्तार करके साथ लाने का हुक्म सुना देता। दरीया मलकी की बलि देने में इसलिए देर लगा रहा था, क्योंकि उसने सोचा था कि एक रुतबा तो वह बागियों को पेश करके हासिल करेगा, दूसरा रुतबा मलकी को बादशाह के हरम में डालने के बाद हासिल करेगा। राजकुमारी जमुना नहीं चाहती थी कि यह नौबत आए। उसने दरीये को बुला कर हुक्म सुना दिया कि बेगुनाह कैदियों को रिहा करके महल में भेज दिया जाए।

राजकुमारी का हुक्म सुन कर दरीया अपने डेरे पर चला गया। रास्ते में उसे खयाल आया कि बागियों के मामले में राजकुमारी का हुक्म मानना जरूरी नहीं था। बादशाह बेटी को समझा देगा। उसने रातोंरात कैदियों को दो मंजिलें आगे ले जाने का फैसला कर लिया।

राजकुमारी जमुना का मलकी से मेल-जोल बढ़ गया। उसने मलकी का फकीरी बाना उतरवा कर उसे शाही लिबास पहना दिया। वे सारी रात अकबर के अटल इंसाफ की बातें करती रहीं। मलकी का मन इन बातों की बजाय कैमे की तरफ ज्यादा लगा हुआ था। सुबह ही सिपाही कैमे को साथ लेकर आने वाले थे।

सुबह जब दरबान ने दस्तक दी तो मलकी कैमे से मिलने के लिए दौड़ी। लेकिन कैमा वहां नहीं था। दरबान ने बताया कि दरीया तो रातोंरात कैमे और उसके साथियों को कहीं और ले गया है। दरबार के सूबेदार की यह हिम्मत ? राजकुमारी से गुस्से की ताब नहीं झेली जा रही थी। दरबान खड़ा कांपे जा रहा था।

जमुना दिल्ली जाने के लिए तैयार हो गई। उसने मलकी को भी अपने साथ ले लिया। रास्ते भर वह यह सोचती रही कि बूढ़े बादशाह को इस घटना के बारे में किस ढंग से बताना चाहिए।

दिल्ली पहुंच कर मलकी को मुंह खोलने या बादशाह के सामने जाने की इजाजत नहीं थी। यह काम राजकुमारी जमुना का था, यह उसकी इज्जत का सवाल बन गया था।

सबसे पहले राजकुमारी अपनी मां से मिली। उसने अपनी मां को वह लड़की भी दिखाई जो किसी दिन उसकी सौत बन सकती थी। उसने दरीये की चाल भी खोल कर मां को समझाई। रानी और राजकुमारी ने मिल कर यह फैसला भी किया कि वे दोनों बादशाह को मलकी के रिश्ते की बात की खबर दिए बगैर ही दरीये का खात्मा करवा देंगी।

बूढ़ी मां के दिल पर मूंग दली जा रही थी। बादशाह के खुले दिल की वजह से उसे सुख भी मिले थे और दुख भी कम नहीं झेलने पड़े थे। उसे वे घड़ियां नहीं भूलीं थीं जब किसी की जवानी पर मस्त होकर बादशाह रात-रात भर जरूरी कामों के बहाने रानी के महल में वापिस नहीं लौटता था। उसे बादशाह के उन जरूरी कामों का पता था, जिनके बहाने वह सारी रात बाहर गुजार देता था। रानी को इस बात का भी पूरा एहसास था कि जब से वह बूढ़ी हुई थी, बादशाह के ये काम बढ़ते जा रहे थे। रानी अब अपने दुखों को

और ज्यादा नहीं बढ़ाना चाहती थी। उसकी होने वाली सौत उसके सामने बैठी थी, जो उम्र में उसकी बेटी से भी छोटी थी।

रानी को दरीया जहर दिखाई देने लगा। उसने फैसला कर लिया कि वह दरीये का बीज नष्ट करके रहेगी।

जब बादशाह के महल में दाखिल होने का वक्त हुआ तो रानी के हुक्म से महल के सारे दीये बुझा दिए गए थे। शमादान तोड़ दिए गए थे। रानी ने अपना हार-सिंगार उतार कर फेंक दिया था। बादशाह आया तो रानी खटपाटी लेकर लेटी हुई थी।

यह देख कर बादशाह हैरान और परेशान रह गया। आज तो उसने ऐसा कोई काम नहीं किया था, जिस पर रानी को शिकायत होती। यह बात उसका मन जानता था। वैसे भी उसके विवाहित जीवन में आज यह पहला मौका था कि उसकी इस मलिका ने किसी बात पर गुस्सा जाहिर किया था। आज तक उसने कभी कोई गुस्सा जाहिर नहीं होने दिया था। आज इस तरह की कौन सी बात हो गई थी ? बादशाह परेशान था।

बादशाह अपनी रानी के आगे झुक गया। उसको झुका देख कर रानी ने राय मुबारक और उसके साथियों की रिहाई की मांग की। बागियों को रिहा करना अकेले बादशाह के वश की बात नहीं थी। यह फैसला तो दीवाने-सजा ही कर सकता था। बागी और जासूस देश के दुश्मन थे। बागी को रिहा करने के लिए दलील की जरूरत थी। रानी के पास इसकी कोई दलील नहीं थी। अगर दरीया अपने भाई को बागी कह रहा था तो इसे गलत कैसे साबित किया जा सकता था ?

फैसला नाजुक था। बादशाह अकबर का इंसाफ सारी दुनिया में मशहूर था। वह बिना वजह किसी को फांसी का हुक्म कैसे दे सकता था ? लेकिन दरीये द्वारा मलकी को बादशाह के हरम में पहुंचने वाली दलील देना तो खुद अपने पैर पर कुल्हाड़ी मारने वाली बात थी। बादशाह मलकी पर मोहित हो सकता था।

रानी ने अपना दुख अपने भाई बीरबल को बताया। बीरबल के पास किस समस्या का हल नहीं था ? उसने समझाया कि जाटों-जमीदारों में अपने भाइयों को कत्ल करना आम बात है। हो सकता है कि अपने भाई राय मुबारक को बागी सिद्ध करने के पीछे दरीये की यही चाल हो। राय मुबारक और उसके वारिसों की मौत के बाद उनकी जायदाद और गांव की नंबरदारी दरीये को ही मिलने वाली थी। इतने कमीने विचारों वाले दरीये को फांसी देना जितना लाजिमी था, कैमे और उसके साथियों की रिहाई भी उतनी ही स्वाभाविक थी।

बादशाह को इससे ज्यादा और किसी दलील की जरूरत नहीं थी। उसने फैसला सुना दिया।

दरीये को फांसी देने से पहले उसकी आखिरी ख्वाहिश पूछी गई। लेकिन दरीये की सब ख्वाहिशें मर चुकी थीं। ऊंची पदवी और बदले की भावना ने उसके दिमाग में जो फितूर पैदा किया था, वह दूर हो रहा था। उसकी आखिरी ख्वाहिश भला क्या हो सकती थी ? उसने कैमे और मलकी को बुला कर मलकी का हाथ कैमे के हाथ में दे दिया। यह

देख कर राय मुबारक के बाकी परिवार के लोगों की आंखें में आंसू आ गए। दरीये की आंखों से भी आंसू बहने लगे। बड़े भाई से माफी मांग कर वह फांसी के तख्ते पर जा चढ़ा।

उस रात जमुना नदी के किनारे कैमा और मलकी एक-दूसरे से पहली बार एकांत में मिले। चांद की चांदनी, नदी का एकांत, बढ़ते पानी की शांति और दरीये के अंतिम समय के पश्चाताप ने उन दोनों को एक-दूसरे के और भी करीब ला दिया था।

अब जब कैमे ने मलकी को अपने आलिंगन में लिया तो मलकी की आंखों में खुशी के आंसू छलक आए।

भारत मुद्रणालय, पंचशील गार्डन, नवीन शाहदरा, दिल्ली-110032 द्वारा मुद्रित